संतबानी

सतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जगत्-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उनमें से विशेष तो पहिले छपी नहीं थीं और जो छपी थीं सो प्राय ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नकल कराके मँगवाये। भरसक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं, और फुटकर शब्दों की हालत में सर्व-साधारण के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्राय कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उनका जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उनके वृत्तांत और कौतुक संक्षेप से फुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अंतिम पुस्तकें इस पुस्तक माला की अर्थात् "संतबानी संग्रह" भाग १ [साखी] और भाग २ [शब्द] छप चुकीं जिन का नमूना देखकर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी वैकुंठ-बासी ने गद्गद होकर कहा था— "न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और बुद्धिमानों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१६ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान् महाराज काशी नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिससे वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तक छपी हैं जिनमें प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है—उनके नाम और दाम इस पुस्तक के अन्त वाले पृष्ठों में देखिये।

मैनेजर, बेलवेडियर छापाखाना,

इलाहाबाद।

सूचीपत्र

धर्म्मदासजी का जीवन-चरित्र

धनी धर्म्मदासजी जाति के कसौंधन बनिये बाधोगढ़ नगर के भारी महाजन थे। उनके जीवन और मृत्यु के समय का उनके मत वालों या किसी ग्रंथ से ठीक ठीक पता नहीं चलता परन्तु इतना पक्का है कि कबीर साहेब से इनकी अवस्था कम थी और उनके पन्द्रह बीस बरस पीछे चोला छोड़ा। इस हिसाब से उनके जन्म का समय बिक्रमी सम्बत् १४७५ और १५०० के दर्मियान और परमधाम सिधारने का समय सम्बत् १६०० के क़रीब समझना चाहिये क्योंकि उन्होंने पूरी अवस्था को पहुँच कर शरीर त्याग किया।

धर्म्मदासजी बाल अवस्था ही से बड़े धर्म्मात्मा और भगवत भक्त थे परन्तु आदि में पुराने कर्म्म धर्म्म और मूर्त्ति पूजन के बँधुए थे। सैकड़ों पंडितों और पुजारियों और साधुओं की उनके यहाँ सदा भीड़ भाड़ लगी रहती थी और अपना मुख्य समय ठाकुर की मूरत और शालग्राम की पूजन और ब्राह्मणों और साधुवों के खिलाने पिलाने और आदर सत्कार और कथा कीर्त्तन में ख़र्च करते थे और दूर दूर के तीर्थों में दर्शन और यात्रा कर आये थे।

जब धर्म्मदास जी के चेताने का समय आया तब सतगुरु कबीर साहेब पहिले उनसे मथुरा में मिले और रास्ते मे चरचा मूर्त्ति पूजन और तीर्थ ब्रत के खंडन और संत मत के मंडन की की। कुछ दिन पीछे धर्म्मदास जी काशी यात्रा को आये तब कबीर साहेब के फिर दर्शन मिले और जो कुछ संशय भर्म धर्म्मदास जी के मन में बाक़ी रह गये थे उनको कबीर साहेब ने पूरी भाँति मिटा दिया और इसके पीछे संत मत का उपदेश देकर दया दृष्टि से उनके घट के पट खोल दिये। "अमर सुख निधान" ग्रन्थ में कबीर साहेब और धर्म्मदासजी की गोष्टी बिस्तार के साथ लिखी है—उसकी थोडी सी कड़ियाँ जिनमें धर्म्मदासजी के कबीर साहेब का दर्शन पाने और फिर काशी में शरण लेने का वर्णन है नीचे लिखे जाते हैं।

॥ रमैनी ॥

(जिन्द)

चौपाई—कहैं कबीर मैं काया सोधा। जो जस बूझि ताहि तस बोधा॥
अपने घट में कीन्ह विचारा। देखौं धरमदास दरबारा॥
धरमदास वधो के वानी[1]। प्रेम प्रीति भक्ती मैं जानी॥
सालिगराम की सेवा करई। दया धरम बहुतै चित धरई॥
साधु भक्त के चरन पखारै। भोजन कराइ अस्तुति अनुसारै॥
भागवत गीता बहुत कहाई। प्रेम भक्ति रस पियै अघाई॥
मनसा बाचा भजै गोपाला। तिलक देइ तुलसी की माला॥
द्वारिका जगन्नाथ होइ आये। गया बनारस गंगा न्हाये॥
बोलत बचन सत्त सुभ वानी। बृथा कहै कबहूँ ना जानी॥

दोहा—राम कृष्न को सुमिरे, तीरथ व्रत दृढ़ चेट[2]।
मथुरा परसत जब गये, भे कबीर सौं भेट॥

चौपाई—जिंद[3] रूप जब धरे सरीरा। धरमदास मिलि गये कबीरा॥
उदित वदन मुदित सुख चैना। हँस मुसुकाय कहे मुख बैना॥
धरमदास तुम हौ बड़ ज्ञानी। परम भक्त भक्ती मैं जानी॥
तुम सा भक्त न देखौं आना। धर्म तुम्हारा कवन स्थाना॥
कवन दिसा से तुम चलि आये। जैहौ कहाँ कहा मन लाये॥
काकी भक्ति करौ चित लाई। सो कित बसै कौन से ठाँई॥
पूछत मन में दुख जनि मानो। करता आदि पुरुष पहिचानो॥
का भे माला तिलक के दीन्हे। का भे तीरथ बरत के कीन्हे॥
का भे सुनत भागवत गीता। चिन्ता मिटी न मन को जीता॥

दोहा—जेहि कर्ता से ऊपजे, सो बसे कौने देस।
ताहि चीन्ह परिचय करो, छोड सकल भ्रम भेस॥

(धर्म्मदास जी)

चौपाई—सुनि धर्मदास अचभो भयऊ। ऐसो वचन काहु ना कहेऊ॥
जिंद रूप इन ही कै देखा। कहत वचन सुख बहुत विवेका॥
सुनो जिंद मोरे दृढ़ ज्ञाना। वास मोर वधो अस्थाना॥
वरन कसौंधन जाति को वानी। भजौं राम कृष्न सारँग पानी॥
पारब्रह्म सेवौं चित लाई। सीताराम जपौं सुखदाई॥
✓ सेवौं सालिगराम के पाऊँ। अर्द्ध-मुखी[4] सखी लव लाऊँ॥

(१) वधोगढ़ निवासी बनिये। (२) चेष्टा। (३) जिन। (४) सिर झुका कर।

सकल भक्त के रहौं अधीना। गुरु सेवा जिन दिच्छा लीन्हा ॥
विरथा वचन सुनौं ना कहऊँ। प्रेम भक्ति में निस दिन रहऊँ ॥

दोहा—मोरे संका कछु नहीं, सेवो श्रीरघुनाथ।
(जिन) ध्रू प्रहलाद उवारिया, सो हरि हमरे साथ ॥

(जिंद)

मैं हौं जिंद सुनु वचन हमारा। तुम जनि होहु काल कै चारा ॥
राम नाम सव दुनी पुकारे। राम अगिन जो काठै जारे ॥
काहे न सुरति करौ घट माहीं। चीन्ह चीन्ह बूडौ भव माहीं ॥
जिन्हैं कहत हौ नंद के लाला। सो तो भये सवन के काला ॥
छल वल करि वे सव छलि डारे। पाडव जाइ, हिवारे गारे ॥
पांडव सम को भक्त कहावा। तिनहुँ को काल वली भरमावा ॥
दसरथ सुत कहिये श्रीरामा। तिनहूँ चीन्हौ काल अकामा ॥
करता राम कस भे मति-हीना। कपट मृगा उनहूँ नहिं चीन्हा ॥

दोहा—दोउ करता विरतत हैं, कीन्हे जम के काम।
जीव अनेक प्रलय किये, ऐसे कृष्न अरु राम ॥

चौपाई—धर्म्मदास है नाम तुम्हारा। काहे न चीन्हौ वचन हमारा ॥
ज्ञान दृष्टि से चीन्हौ वानी। पाखँड पाहन पाखँड पानी ॥
करता पाखँड कवहुँ न होई। यह संसय सव दुनी विगोई ॥
सालिगराम है बोलनहारा। देह सरूप तन साजि हमारा ॥
धर्म्मदास सुनि चीन्हेउ ज्ञाना। हित के वचन सुनत मन माना ॥
कोइ करता कहिये भगवाना। नाम मोर इन कैसे जानां ॥
इन कर वचन ज्ञान औगाहा[1]। जिंद भेष धारे कोउ आहा ॥
थापै सालिगराम न सेवा। तीरथ वरत कौ मेटै भेवा ॥
राम कृष्न को मेट वताना। अहै जिंद को कैसो ज्ञाना ॥

दोहा—धर्म्मदास मस्टी[2] रहे, वहुत खोज नहिं कीन्ह।
सीधा[3] लै डेरे गये, जिंद उतर[4] नहि दीन्ह ॥

चौपाई—इतना गुष्ट वजार मे कीन्हा। आप दुकान में डेरा लीन्हा ॥
धर्म्मदास पहुँचे निज डेरा। मन महँ सोच कीन्ह वहुतेरा ॥
वारह वरस तीर्थ हम कीन्हा। द्वारिका जाइ छाप हम लीन्हा ॥
श्रीनाथ परसे चित लाई। राम नाथ दक्खिन होइ आई ॥
दक्खिन परस गोदावरि गयेऊ। मेला भरो दरसन तहँ कियेऊ ॥

---

(१) गहिरा। (२) मौन, चुप। (३) भोजन की सामग्री। (४) जवाव।

परसि सिवाला औ हरिद्वारा। नीमषार मिस्र पग धारा ॥
बद्रीनाथ दुवारे गयेऊ। श्रीविंद्राबन मथुरा अयेऊ ॥

दोहा—मकर त्रिवेनी परसेहू, औ कासी अस्थान।
औरौ परसे जगन्नाथ, गंगासागर किये अस्नान ॥

चौपाई—इतने तीर्थ छेत्र हम धाये। यह दुसरे हम मथुरा आये ॥
राम नाम निज प्रान अधारा। सो यह जिंद मेटि सब डारा ॥
कीजे कहा जिंद को भाई। जाति मलेच्छ कथै चतुराई ॥
धरमदास जब नफर[1] बुलावा। घर लिपाय ज्योनार चढ़ावा ॥
चौका बैठि कीन्ह अस्नाना। छानि छानि जल अदहन दीन्हा ॥
अति पवित्र से करै रसोई। सालिगराम कै भोजन होई ॥
लकडी चिउँटी उठीं अपारा। कोटिन जीव भये जरि छारा ॥

दोहा—धरमदास को दुख भयो, हरि हरि करत पुकार।
जीव अनेक प्रलय भये, अस ज्योनार धिक्कार ॥

चौपाई—लकडी काढि जल माहिं बुझाई। चूल्हा बुझायो बहु जल लाई ॥
जो कछु जरे सो जरिगे भाई। जो बाचे सो लेहु बचाई ॥
नफर हाथ जिंद बुलवाई। यह भोजन लै जिंदहि खाई ॥

(जिंद)

धरमदास तुम बडे सुजाना। जीव दया काहे नहिं जाना ॥
कीन्हा नेम अनेक अचारा। लकडी धोई रचे ज्योनारा ॥
निरखि निरखि तुम काहे न बीना। नाम तोरि देवतन कहि दीन्हा ॥
जौलौं जीव दया नहिं आवै। तीरथ भरमि के जनम गँवावै ॥
दसरथ सुत श्रीराम कहाये। तिनहूँ अपने जिव सताये ॥

दोहा—बैर बालि के हतन को, विष्नु देह धरि दीन्ह।
जो जो जिव मारे हते, तिन तिन बदला लीन्ह ॥

चौपाई—बचन हमार हिये में धरहू। ससय तजि के भोजन करहू ॥
आतम कष्ट कबहुँ ना दीजे। रुचे सो प्रेम से भोजन कीजे ॥
हरि ना मिलैं अन्न के छाँडे। हरि ना मिलैं डगर ही माँडे ॥
हरि न मिलैं घरबार तियागे। हरि न मिलैं निसु बासर जागे ॥
दया धरम जहँ बसै सरीरा। तहाँ खोजिले कहै कबीरा ॥
सुनि धर्म्मदास धीर्ज मन कीन्हा। भली सीख जिंद मोहिं दीन्हा ॥
इन के ज्ञान महा रस बानी। मानो बचन अमी रस सानी ॥
आन प्रसाद पत्र[2] भरि लीन्हा। काढि परोसि के भोजन दीन्हा ॥

---

(१) नौकर। (२) पत्तल।

दोहा— तुम ले जावो जिद जी, हम करिवै फरहार।
लंघन न करिहौं पीर जी, मानौं वचन तुम्हार॥

चौपाई—दै प्रसाद उठि आसन आयेऊ। धरमदास फरहार मँगायेऊ॥
सालिगराम को अर्पन कीन्हा। पुनि भोजन आपु ही कीन्हा॥
लिये आचमन अमृत मीठे। आसन करि सुचित्त होइ बैठे॥
पहर एक हरि चरचा भयेऊ। पुनि निद्रा करने को गयेऊ॥
रैन सिरानी भयो बिहाना। नफर सहित उठि बाहिर आना॥
धरमदास बंधो चलि आये। बाल गोपाल मनहि सुख पाये॥
जिद वचन जब हिरदे आये। अंतर गत बहुते सुख पाये॥
आवै फिरि तब दरसन पाऊँ। पूछूँ आदि अंत चित लाऊँ॥

दोहा—सत्त सत्त सब उन कही, जानि परै मोहिं सार।
जिद नाहिं कोइ पुरुष है, अस बोलै ब्रह्म हमार॥

चौपाई—धरमदास मन कीन्ह विचारा। देवँ महोच्छ्व करौं भंडारा॥
सीधा सामग्री बहुत मँगाई। भेष भगत तहँ बहुत बुलाई॥
आये बैरागी औ ब्रह्मचारी। नागबीर आये दूधाधारी॥
फलाहारी अन्नधारी आये। जोगी जिंद बहु भेष बनाये॥
बहुत आये तपसी सन्यासी। जटा भभूत सुन्न बिस्वासी॥
बाजै ताल मृदंग निसाना। संख नाद धुनि होइ निधाना॥
आव भगत सवहिन को कीन्हा। इच्छा भोजन सब को दीन्हा॥
सब को ज्ञान परख्यो धर्म्मदासा। लख्यो ज्ञान सव को विनु सारा॥
कोइ तीरथ कोइ मूर्त्ति वँधावै। कोइ कलि केवल नाम दृढावै॥
कोइ कृष्न गोपालहिं गावै। कोइ दुर्गा सिव सक्ति धियावै॥
जोगी अलख अलख उच्चरई। जिंद सुमिरै अल्लाह खोदाई॥
सन्यासी राम देत ठहराई। परमहंस अविनासी गाई॥

दोहा—एक वात कोइ ना कहै, नाना मति परचंड।
धर्म्मदास परखे मते, जानि परे पाखंड॥

चौपाई—समुझि परौ ऐसो मन माहीं। जिंद का मता काहु सम नाहीं॥
वरस दिना गिरही में रहेऊ। वहुत सुरत कासी की कियेऊ॥
धर्म्मदास कासी चलि आये। हृदय हुती सो दरसन पाये॥
मुक्तिरूप सुख अमृत वानी। नाम कवीर जगत गुरु ज्ञानी॥
विमल विमल साखी पद गावै। जुरी भीर सवहिन समुझावै॥
धर्म्मदास तहँ निरखै ठाढ़ा। चद चकोर जिमि आँखि पसारा॥
पडित ज्ञानी सवै हराये। थाह कवीर की कोइ नहिं पाये॥
धर्म्मदास चीन्हे मन माना। ऐहि जिंद तजि होय न आना॥

दोहा—पिरथम मोहि मथुरा मिले, बहुत बाद हम कीन्ह।
साँच साँच सब उन कही, मन हमार हर लीन्ह ॥

चौपाई—धर्म्मदास हरष मन कीन्हा। बहुरि पुरुष मोहिं दरसन दीन्हा ॥
अपने मन मे कीन्ह बिचारा। इनकर ज्ञान महा टकसारा ॥
दोइ दीन के करता कहाई। इनकर भेद कोउ नहिं पाई ॥
इतना कहि मन कीन्ह बिचारा। तब कबीर उन ओर निहारा ॥
आओ भक्त महाजन पगु धारो। चिहुँकि चिहुँकि तुम काह निहारो ॥
कहिये छिमा कुसल हौ नीके। सुरत तुम्हार बहुत हम मींके ॥
धर्म्मदास हम तुम को चीन्हा। बहुत दिनन में दरसन दीन्हा ॥
बहुत ज्ञान कहसी हम तुमहीं। बहुरि के अब तुव चीन्हो हमहीं ॥
तुम तो भक्त हम जिद फकीरा। सुधि करि देखो सत मत धीरा ॥

दोहा—भली भई दरसन मिले, बहुरि मिले तुम आय।
जो कोई मोसे मिलै, ते जुग बिछुरि न जाय ॥

चौपाई—सुनि धर्म्मदास हिये सुख भरे। सन्मुख धाइ पाँव जा परे ॥
दया सिन्धु चितये भरि नैना। उठि धर्म्मदास अंक भरि लीन्हा ॥
धर्म्मदास कबीर भे भेटा। सत्त सब्द के खुले कपाटा ॥
परगट ज्ञान ध्यान की खानी। सत्त सब्द निज अमृत बानी ॥
जो कोइ सुनै चेत चित लाई। ससय टरै पाप छय जाई ॥

तुलसी साहेब के ग्रथ घटरामायन में लिखा है कि कबीर साहेब काशी में धर्म्मदास जी के घर गये जब वह मूर्त्ति पूजा कर रहे थे और बहुत से पडित और पुजारी जमा थे। कबीर साहेब ने पूछा कि धात की गढी मूरत और पत्थर की बटिया के पूजने का क्या फल है इस पर पुजारी बहुत बिगडे और उनको नास्तिक और भला बुरा कह कर निकाल देना चाहा परन्तु धर्म्मदास जी ने रोका और उनसे देर तक चर्चा करते रहे जिससे उनकी कुछ शाति हुई। फिर कबीर साहेब ने मौज से यह चमत्कार दिखलाया कि एक हिचकी लेकर अपने गले से शालग्राम की बटिया निकाल कर धर दी और फिर उसको बुलाया तो वह हाथ पर आ बैठी। यह कौतुक देखकर धर्म्मदासजी के चित्त में पूरी रीति से कबीर साहेब की महिमा बैठ गई और अपनी स्त्री और पुत्रों को भी उनके चरणों पर गिराया। उनकी स्त्री और जेठे पुत्र चूड़ामणि ने तो पूरे भाव से कबीर साहेब की शरण ली और उनको गुरू

धारण किया परन्तु छोटे बेटे नारायणदास ने नाक भँव सिकोड़ ली और कबीर साहेब को पाखंडी और जादूगर ठहराया।

इन दोनों कथाओं से संतों के इस वचन का प्रमाण मिलता है कि जब स्वतः सत जगत में पधारते हैं तो अपनी निज अंश अर्थात् गुरुमुख को भी देर सवेर लाते हैं और उसी के द्वारे सारी रचना को पवित्र करते हैं। यद्यपि गुरुमुख को परमार्थ का चाव लड़कपन ही से रहता है परन्तु पहले माया का पर्दा उस पर पड़ा रहता है—जब समय आता है तब सतगुरु उसे अपने दर्शन और वचन से एक छिन में चेता देते हैं और माया के परदे को हटा देते हैं। जैसे कबीर साहेब पहिले सत अवतार हुए ऐसे ही धनी धर्म्मदासजी पहिले गुरुमुख प्रगट हुए जो कबीर साहेब की दया दृष्टि से संत गति को प्राप्त हुए।

धर्म्मदासजी ने कबीर साहेब की शरण लेने पर अपना सारा धन दौलत लुटा दिया और काशी में गुरु चरणों मे रहने लगे। उनके पीछे उनके बड़े बेटे चूड़ामणिजी ने भी वही ऊँचा पद पाया परन्तु नारायणदास संतों की साखी के अनुसार काल के अवतार समझे जाते है।

कबीर साहेब के सम्बत् १५७५ मे परमधाम को सिधारने के पीछे धर्म्मदास जी को उनकी गद्दी और सब ग्रंथ मिले और वह बहुत बरस तक जगत जीवों को चेताते और संत मत दृढ़ाते रहे। उनके गुप्त होने पर चूड़ामणिजी को गद्दी हुई और सब ग्रथ मिले सिवाय कबीर साहेब के बीजक के जिसे भागू धर्म्मदासजी के गुरुभाई ने चोरा कर भगवान गोसाँई के हाथ मुक़ाम धनौली जिला तिरहुत को भेज दिया और फिर वहाँ अपनी गद्दी अलग क़ायम की।

धर्म्मदास जी के शब्द हम पाँच वरस से इकट्ठा कर रहे हैं और उनकी बाबत खास काशी के कबीरचौरा की गद्दी और दूसरे महंतों और कबीर पंथी साधुओं से दरियाफ्त किया तो मालूम हुआ कि उनके शब्द कहीं अलग पोथी में लिखे नहीं हैं वरन कबीर साहेब की बानी मे मिल गये हैं। कहते हैं कि न केवल वह पद जिन में अकेले धर्म्मदास जी का छाप है उनके रचे हुए हैं वरन

वह भी जिन में कबीर साहेब और उनका दोनों का नाम है, क्योंकि अपने गुरू कबीर साहेब का नाम भी धर्म्मदासजी ने अपने कितने पदों में सेवक भाव से रख दिया है। इस सम्मति का प्रमाण अक्सर दोनों छापवाले पदों से मिलता है जिन में साफ़ साफ़ धर्म्मदासजी की बिनती कबीर साहेब के चरणों में है। इस हिसाब से आठ दस शब्द दोहरे छाप के जो हमने कबीर साहेब की शब्दावली के पहिले और दूसरे भागों मे छापे हैं और पूरी "ज्ञान गुदड़ी" धर्म्मदास जी की समझी जायगी। जो हो अब उनको यहाँ दुबारा छापने की जरूरत नहीं है पर वैसे और शब्द जो हमको प्रमाणिक कबीरपथियों ने धर्म्मदास जी की बानी कह कर दिये उन्हें हमने इस बानी में शामिल कर दिया है॥

धरमदास जी की शब्दावली

।। सतगुरु महिमा का अंग ।।

।। शब्द १ ।।

गुरु मिले अगम के बासी ।। टेक ।।
उनके चरन कमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी ।। १
उनकी सीत प्रसादी लीजे, छूटि जाय चौरासी ।। २
अमृत बुंद झरैं घट भीतर, साध संत जन लासी[1] ।। ३
धरमदास बिनवै कर जोरी, सार शब्द मन बासी[2] ।। ४

।। शब्द २ ।।

गुरु मोहिं खूब निहाल कियो ।। टेक ।।
बूड़त जात रहे भवसागर, पकरि के बाँहि लियो ।। १
चौदह लोक बसैं जम चौदह, उनहुँ से छोरि लियो ।। २
तिनुका तोरि दियो परवाना, माथे हाथ दियो ।। ३
नाम सुना दियो कंठी माला, माथे तिलक दियो ।। ४
धरमदास बिनवै कर जोरी, पूरा लोक दियो ।। ५

।। शब्द ३ ।।

सतगुरु धोबी जो मिलै, दिल दाग छोड़ावै ।। टेक ।।
ब्रह्म अगिन परगट करै, कर्म भर्म जरावै ।
तत्त की रेह लगाइ कै, लव भाठि चढ़ावै ।। १ ।।
मान सरोवर सागरे, चित घाट बँधावै ।
सुरति सिला पर धोइ कै, मन मैल छोड़ावै ।। २ ।।
नाभि पवन निर्मल निरति, सूरति लौ लावै ।
बजी अवाज ब्रह्मंड में, बिरले लखि आवै ।। ३ ।।

---

(१) चाशनी । (२) दूसरे लिपि मे "लागी" है ।

गुरु गम बानी ऊचरै, पुरुष दरसावै।
कहै कबीर धर्मदास से, अच्छर परसावै ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

सतगुरु चारिउ बरन से ऊँचे ॥ टेक ॥
ना मानो तौ साखि बताओँ, सेवरी के फल रूचे ॥१॥
राजा युधिष्ठिर जज्ञ रचो है, घंट न बाजे संत के रूसे ॥२॥
सुपच भगत जब ग्रास उठाये, बाजे घंट गगन चढ़ि ऊँचे ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सतगुरु सब्द लगै मोहिँ नीके ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

अब गुरु मिले सनेही आई ॥ टेक ॥
चलो सखी जहँ जाइये, जहँ बसै पुरुष पुराना।
चरन चुरामनि[1] चँवर डोलावै, तन की तपन बुझाई ॥ १ ॥
सुरति समानी सार सब्द में, निरत रही लव लाई।
प्रेम पियारी रटै पिया को, यह जिव पुलकित जाई ॥२॥
भवसागर औगाह अगम है, सूझै वार न पारा।
हंस उबारन सतगुरु आये, वही काढ़ि लै जाई ॥ ३ ॥
जन्म जन्म के हंस उबारन, अजहु उबारनहारा।
जा के साँची लगन लगी है, सो वोहि लोके जाई ॥ ४ ॥
कह कबीर धर्मदास से, निरति रहो लौ लाई।
नाम पान जो पाँजी पावै, सो सतलोक बसाई ॥ ५ ॥

॥ शब्द ६ ॥

आज घड़ी आनन्द की, सतगुरु आये मोरे धाम हो ॥टेक॥
आये गुरुदेव सजन पठयो, भयो हरष अपार हो।
सकल सुन्दर साजि आरत, होत मंगलचार हो ॥ १ ॥

(१) धरमदास जी के पुत्र और गुरुमुख का नाम।

दियो दरसन मन लुभायो, सुन्यो बचन अमोल हो।
अछय छाया सघन घन की, करत हंस कलोल हो ॥ २ ॥
दया कीन्हो निर्गुन दीन्हो, आपनी करि सैन हो।
भक्ति मुक्ति सनेही सजनै, लियो परथम चीन्ह हो ॥ ३ ॥
भये कलमल दूर तन के, गई तप्न नसाय हो।
अटल पन्थ कबीर दीन्हा, धर्मदास लखाय हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

मोरे पिया मिले सत ज्ञानी ॥ टेक ॥
ऐसन पिय हम कबहुँ न देखा, देखत सुरत लुभानी ॥ १ ॥
आपन रूप जब चीन्हा बिरहिन, तब पिय के मन मानी ॥ २ ॥
जब हंसा चले मानसरोवर, मुक्ति भरै जहँ पानी ॥ ३ ॥
कर्म जलाय के काजल कीन्हा, पढ़े प्रेम की बानी ॥ ४ ॥
धर्मदास कबीर पिय पाये, मिट गइ आवाजानी ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

गुरु पद अहै सबन से भारी ॥ टेक ॥
चारो बेद तुलै नहिँ गुरु पद, ब्रह्मा बिष्नु और ब्रह्मचारी ॥ १ ॥
नारद मुनि भये गुरुपद भजि कै, जपत सेस संकर की नारी ॥ २ ॥
सुर नर मुनि भये गुरुपद भजि कै, जपत राम अरु जनक दुलारी ॥ ३
धर्मदास मैं गुरुपद भजिहौं, साहेब कबीर समरथ बलिहारी ॥ ४

॥ शब्द ९ ॥

हंस उबारन सतगुरु, जग में आइया।
प्रगट भये कासी में, दास कहाइया ॥ १ ।
बाम्हन औ सन्यासी, तो हाँसी कीन्हिया।
कासी से मगहर आये, कोई नहिँ चीन्हिया ॥ २ ।

मगहर गाँव गोरखपुर, जग में आइया ।
हिन्दू तुरुक प्रमोधि के, पंथ चलाइया ॥ ३ ॥
बिजुलीखाँव पठान, सो कबुर खोदाइया ।
बिजुलीसिंह बघेल, साजि दल[1] आइया ॥ ४ ॥
रानी पतिया पठाय, जीव जनि मारिया ।
मुरदा न होय कबीर, बहुरि पछिताइया ॥ ५ ॥
खोदि के देखी कबुर, गुरु देँह न पाइया ।
पान फूल ले हाथ, सेन[1] फिरि आइया ॥ ६ ॥
हद बाँधो दरियाव, उड़ीसा जाइ के ।
लछमि सहित जगन्नाथ, मिले तहँ धाइ के ॥ ७ ॥
पंडा पाखँड जानि के, कौतुक कीन्हिया ।
एक से अनँत कला होइ, दरसन दीन्हिया ॥ ८ ॥
आगम कहैँ कबीर, सुनो धर्म आगरा ।
बहुत हँस ले साथ, उतरो भव सागरा ॥ ९ ॥

॥ शब्द १० ॥

धन हो धन साहेब बलिहारी ॥ टेक ॥
कासी में हाँसी करवाई, गनिका संग लगाई ।
हरि के पंडा जरत उबारे, अपने चरन जल ढारी ॥ १ ॥
मगहर में एक लीला कीन्हीं, हिन्दू तुरुक ब्रत धारी ।
कबर खोदाइ के परचा दीन्हो, मिटि गयो झगरा भारी ॥ २ ॥

---

(१) फौज । कबीर साहेब के जो चरित्र इन दोनों शब्दों (९ और १०) में इशारे मे लिखे हैं उनकी सविस्तार कथा कबीर साहेब के जीवन-चरित्र में मिलेगी जो कबीर शब्दावली भाग १ के आदि में छपा है ॥

पांडव जज्ञ सुफल ना होई, कोटिन जुरे अचारी ।
सुपच भक्त ने ग्रास उठायो, घंट बज्यो तब भारी ॥३॥
तच्छक आन डस्यो रानी को, बिषस लहर तन भारी ।
रानी पर जब किरपा कीन्हाँ, उनहूँ को हंस उबारी ॥४॥
हरि को मंदिर बनन न पावे, समुँद लहर उठि भारी ।
आसा रूप कै समुँद हटायो, तीरथ करै संसारी ॥५॥
जो जा सुमिरे सो ता प्रगटै, जग में नर अरु नारी ।
धरमदास पर किरपा कीन्हीँ, हंसराज लखे भारी ॥६॥
जो जो सरन गही सतगुरु की, उबरे नर अरु नारी ।
साहेब कबीर मुक्ति के दाता, हम को लियो उबारी ॥७॥

॥ नाम महिमा का अंग ॥

॥ शब्द-१ ॥

नाम रस ऐसा है भाई ॥ टेक ॥

आगे आगे दाहि चले, पाछे हरियर होइ ।
बलिहारी वा बृच्छ की, जड़ काटे फल होइ ॥१॥
अति कड़ुवा खट्टा घना रे, वा को रस है भाई ।
साधत साधत साध गये हैं, अमली होय सो खाई ॥२॥
सूँघत के बौरा भये हो, पीयत के मरि जाई ।
नाम रस्स सो जन पिये, धड़ पर सीस न होई ॥३॥
संत जवारिस[1] सो जन पीवै, जा को ज्ञान प्रगासा ।
धरमदास पी छकित भये हैं, और पिये कोइ दासा ॥४॥

(१) पेट के दर्द की दवा ।

॥ शब्द २ ॥

नाम रटन रट लागि रहै, कोइ साधु सयाना ॥ टेक ॥
साध के चाकर दुइ जना, बंका सुर[1] ज्ञाना[2] ।
सास आरप आगे धरो, तब बाँधो बाना ॥१॥
साहेब द्वारे भीड़ भे, बिरला ठहराना ।
कंचन कोट सुमेर बना, गज दीन्हा दाना ॥२॥
चाल चले गजराज की, अलमस्त समाना ।
सीस तिलक बंस बेलि है, जम देखि डेराना ॥३॥
धरती मूल बिचारि के, तब धुनि उदकाना ।
कोटि गऊ को दान दे, नहिँ नाम समाना ॥४॥
कह कबीर धर्मदास से, पावै पद निरबाना ।
आदि अंत की बारता, सतगुरु परवाना ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

चाकर हौँ निज नाम का, सुनो संत सिपाही ॥ टेक ॥
चरन कँवल सतगुरु दिया, हम सीस चढ़ाई ।
सत्त दरस ऐसे भया, गुरु कमर बँधाई ॥१॥
मारे मुरचा सब्द से, भ्रम के गढ़ टूटे ।
अछर पुरुष एक वृच्छ है, तहँ लागे जाई ॥२॥
काँपन लागे दूतवा, चढ़े संत सिपाही ।
मारे गोला नाम के, सब फउज पराई ॥३॥
नौबत बाजे लोक में, जीते जमराई ।
कह कबीर धर्मदास से, फिरी नाम दोहाई ॥४॥

(१) बाँका सूरमा । (२) ज्ञानी ।

॥ शब्द ४ ॥

हम सत्त नाम के बैपारी ॥ टेक ॥

कोइ कोइ लादै काँसा पीतल, कोइ कोइ लौंग सुपारी ।
हम तो लाद्यौ नाम धनी को, पूरन खेप हमारी ॥ १ ॥
पूँजी न टूटै नफा चौगुना, बनिज किया हम भारी ।
हाट जगाती रोक न सकि है, निभय गैल हमारी ॥ २ ॥
मोती बुंद घट ही में उपजे, सुकिरत भरत कोठारा ।
नाम पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी ॥ ३ ॥

॥ चेतावनी का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

सब्द की बेरिया जात टरी ॥ टेक ॥

उहाँ सो आये का कहि आये, का करने लगे आन ।
इहाँ आइ परपंच भुलाने, बैठे अधम ठिकान ॥ १ ॥
भाई बंधु सुत कुटुम कबीला, ये कह जग में नाम ।
तुम जाने उनहीं सँग रहना, ठाढ़ काल मुसक्यान ॥ २ ॥
आये नाव काठ से 'बोझी, दिन दिन अति गुरुवाई ।
आगे जाम[1] लेइ कर लूटी, देइ छाती पर लाती ॥ ३ ॥
गहे सब्द ज्ञान कर दीपक, बैठे सत के पासा ।
साहेब कबीर हंसन के राजा, धरमदास निजु दासा ॥ ४ ॥

॥ शब्द २ ॥

थोरे दिन की जिंदगी, मन चेत गँवार ॥ टेक ॥

कागद कै तन पुतरा, डोरी साहेब हाथ ।
नाना नाच नचावही, नाचै संसार ॥ १ ॥

---

(१) जम ।

काच माटी कै घइलिया, भरि लै पनिहार।
पानी परत गल जावही, ठाढ़ी पछिताय ॥ २ ॥
जस धूआँ कै धरोहरा, जस बालू कै रेत।
हवा लगे सब मिटि गये, जस करतब प्रेत ॥ ३ ॥
ओछे जल कै नदिया हो, बहै अगम अपार।
उहाँ नाव नहिँ बेरा हो, कस उतरब पार ॥ ४ ॥
धरमदास गुरु समरथ हो, जा को अदल अपार।
साहेब कबीर सतगुरु मिले, आवा गवन निवार ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३ ॥

कहो केते दिन जियबो हो, का करत गुमान ॥ टेक ॥
कच्चे बासन का पिंजरा हो, जा में पवन समान।
पंछी का कौन भरोसा हो, छिन में उड़ि जान ॥ १ ॥
कच्ची माटी के घड़ुवा हो, रस बुंदन सान।
पानी बीच बतासा हो, छिन में गलि जान ॥ २ ॥
कागद की नइया बनी, डोरी साहेब हाथ।
जौने नाच नचैहैँ हो, नाचब वोही नाच ॥ ३ ॥
धरमदास एक बनिया हो, करै झूठी बजार।
साहेब कबीर बनजारा हो, करैँ सत बपार ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

घड़ा एक नीर का फूटा। पत्र एक डार से टूटा ॥ १ ॥
ऐसहि नर जात जिँदगानी। अजहु नहिँ चेत अभिमानी ॥ २ ॥
भुलो जनि देख तन गोरा। जगत में जीवना थोरा ॥ ३ ॥
निकरि जब प्रान जावैगा। कोई नहिँ काम आवैगा ॥ ४ ॥
सजन परिवार सुत दारा। सभे एक रोज होइ न्यारा ॥ ५ ॥
तजो मद लोभ चतुराई। रहो निरसंक जग माहीँ ॥ ६ ॥

सदा ना जान ये देही। लगावो नाम से नेही ॥ ७ ॥
कहै धर्मदास कर जोरी। चलो जहँ देस है तोरी ॥ ८ ॥

॥ उपदेश का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

सुचित होइ सब्द बिचारो हो ॥ टेक ॥
सब्द बिचार नाम धर दीपक, लै उर बारो हो।
जुगन जुगन्ह के अरुझनि, छन में निरुवारो हो ॥ १ ॥
पंथे चलो गरीब होय, मद मोह निवारो हो।
साहेब नैन निकट बसै, सत दरस निहारो हो ॥ २ ॥
आपे जगत जिताइ के, मन सब से हारो हो।
जवन बिधी मनुवा मरे, सोइ भाँति सम्हारो हो ॥ ३ ॥
बास करो सत लोक में, दुख नगर उजाड़ो हो।
धरमदास निज नाम पर, तन मन धन वारो हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द २ ॥

मन रहो आसन मारि, मँदिल से न डोलो हो ॥ टेक ॥
राते माते रहो, बहुत जनि बोलो हो।
निरखत परखत रहो, पलक जनि खोलो हो ॥ १ ॥
रजनी के दिहल किवार, सत कुंजी खोलो हो।
ते उँजियारि में बैठि, निर्भय होइ खेलो हो ॥ २ ॥
चौका बना चौगान, जगमग अभिराज[1] हो।
रवि ससि की छवि निरखि, हंसा होइ गाज हो ॥ ३ ॥
ब्रह्मा विष्नु महेस, निर्गुन अस्थूला हो।
हिलिमिलि करु सतसंग, फिरत कहाँ भूला हो ॥ ४ ॥

---
(१) सर्वोपरि, सब का राजा।

गुरु के चरन धरु सीस, और सब त्यागो हो ।
जहाँ जहाँ तुम रहो, भक्ति बर माँगो हो ॥ ५ ॥
चमकत निर्मल रूप, झलकै जस हीरा हो ।
होइ मगन धर्मदास, बैठे तेहि तीरा हो ॥ ६ ॥

॥ शब्द ३ ॥

वा करता को सेइये, जिन सृष्टि उपाई ॥ टेक ॥
कोटिन ब्रह्मा बेद पढ़ि, पढ़ि जनम गँवाई ।
कोटिन बिष्नू होइ गये, कोइ पार न पाई ॥ १ ॥
तीर्थ गये कोइ ना तरै, चलि चलि मरि जाई ।
जल बिच आस लगाइ कै, मंगर[1] तन पाई ॥ २ ॥
झूठे पंडित बेद पढ़ि, पढ़ि जग भरमाई ।
उन के पुरखा मरि गये, उन काहे न जियाई ॥ ३ ॥
आदि अंत की बारता, सतगुरु से पावो ।
कह कबीर धर्मदास से, हंसा समुझावो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

का भरमत भटकत फिरो, करो खोज बनाई ।
मूल सब्द चीन्हे बिना, जिव जम लै जाई ॥ १ ॥
पान परवाना पाइ कै, निज लगन धरावो ।
जम की कला मिटाइ कै, लेव अंग चढ़ाई ॥ २ ॥
मूल सब्द हम कहि दिया, जुग जुग समुझाई ।
जो निस्चै करि मानिहै, तेहि लेँव बचाई ॥ ३ ॥
कह कबीर धर्मदास से, हम लीन्ह चिताई ।
अजर अमर घर लै चलूँ, जहँ काल न जाई ॥ ४ ॥

---

(१) मगर ।

॥ शब्द ५ ॥

सुरत निरत दोउ मतो[1] करत हैं, चलो सतगुरु पै जइये हो॥टे०॥
सतगुरु चीन्हि चरन चित लैये, दृष्टि से दृष्टि मिलइये हो।
सतगुरु साहु साधु सौदागर, भक्ति पटो[2] लिखवइये हो॥१॥
मन मानिक की खुलीं किवरियाँ, चढ़ गइ झमकि अटरिया हो।
नहिँ वहँ डोरि नहीँ वहँ रसरी, अमर लोक कस पइये हो॥२॥
है वहँ डोर सुरति कर सोझी[3], गुरु के सब्द चढ़ि जइये हो।
घर है रमानो[4] मेरो बगर[5] रमानो, फूल रही फुल बगिया हो॥३॥
अछै कमल पर बहै सुरसरी[6], तहँ बैठे हंस नहइये हो।
धरमदास की अरज गुसाँई, आवागवन मिटइये हो॥४॥

॥ बिरह और प्रेम का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

सतगुरु आवो हमरे देस, निहारौं बाट खड़ी ॥ टेक ॥
वाहि देस की बतियाँ रे, लावैं संत सुजान।
उन संतन के चरन पखारौं, तन मन करौं कुरबान ॥ १ ॥
वाही देस की बतियाँ हम से, सतगुरु आन कही।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥ २ ॥
भूल गई तन मन धन सारा, व्याकुल भया सरीर।
बिरह पुकारै बिरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥ ३ ॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल में कियो निहाल।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जंजाल ॥ ४ ॥

(१) सलाह। (२) पट्टा। (३) सीधी। (४) रमनीक। (५) हाता। (६) गंगा।

॥ शब्द २ ॥

मितऊ मड़ैया सूनी करि गैलो ॥ टेक ॥

अपन बलम परदेस निकरि गैलो,
हमरा के कछुवो न गुन दै गैलो ॥ १ ॥
जोगिन होइ के मैं बन बन ढूँढ़ौं,
हमरा के बिरह बैराग दै गैलो ॥ २ ॥
सँग की सखी सब पार उतरि गैलीं,
हम धन ठाढ़ी अकेली रहि गैलो ॥ ३ ॥
धरमदास यह अर्ज करतु है,
सार सब्द सुमिरन दै गैलो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३ ॥

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥

तुमहीं छाँड़ि भजूँ नहिं औरै, नाहिं दूसरी आसा ॥ १ ॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥ २ ॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिं बिस्वासा ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, देहु निज लोक निवासा ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

साहेब चितवो हमरी ओर ॥ टेक ॥

हम चितवैं तुम चितवो नाहीं, तुम्हरो हृदय कठोर ॥ १ ॥
औरन को तो और भरोसा, हमैं भरोसो तोर ॥ २ ॥
सुखमनि सेज बिछाओं गगन में, नित उठि करौं निहोर ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, साहेब कबीर बन्दीछोर ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५ ॥

मैं हेरि रहूँ नैना सो नेह लगाई ॥ टेक ॥

राह चलत मोहिं मिलि गये सतगुरु, सो सुख बरनि न जाई ।
देइ के दरस मोहिं बौराये, लै गये चित्त चुराई ॥ २ ॥

छबि सत दरस कहाँ लगि बरनौं, चाँद सुरज छपि जाई ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, पुनि पुनि दरस दिखाई ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

कहौं बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से ।
किधौं मिटै जब मिलहुँ पीव से ॥ १ ॥
तन तलफै हिय कछु न सोहाय ।
तोहि बिन पिय मो से रहल न जाय ॥ २ ॥
धरमदास की अरज गुसाँईं ।
साहेब कबीर रहौं तुम छाँहीं ॥ ३ ॥

॥ शब्द ७ ॥

आज मेरे सतगुरु आये मिहमान ।
तन मन जिवड़ा करौं कुरबान ॥ १ ॥
फूली फिरौं न अंग समान ।
सतगुरु आवन सुनि लये कान ॥ २ ॥
चंदन चौकी अँगना बिछान ।
ता पर बैठे सतगुरु आन ॥ ३ ॥
फूलन हार गले पहिरान ।
चंद चकोर ज्यों इकटक ध्यान ॥ ४ ॥
चरन धोय चरनोदक पान ।
सगले पाप मोचन किये आन ॥ ५ ॥
प्रेम सहित बिंजन पकवान ।
कंचन थाल सजाये आन ॥ ६ ॥
हाथ जोरि पुनि बिनती ठान ।
जेँवो सतगुरु पुरुष पुरान ॥ ७ ॥

सीत प्रसाद सतगुरु दियो दान ।
जम किंकर को मर्दन मान ॥ ८ ॥
धर्मदास अमन गुजरान ।
साहेब कबीर निछावर प्रान ॥ ९ ॥

॥ शब्द ८ ॥

मोरा पिया बसै कौने देस हो ॥ टेक ॥
अपने पिया के ढुंढ़न हम निकसीँ, कोइ न कहत सनेस हो ।१।
पिया कारन हम भई हैं बावरी, धरो जोगिनिया के भेस हो ।२।
ब्रह्मा बिष्तु महेस न जाने, का जानै सारद सेस हो ।३।
धनि जो अगम अगोचर पइलन, हम सब सहत कलेस हो ।४।
उहाँ के हाल कबीर गुरु जानैँ, आवत जात हमेस हो ।५।

॥ शब्द ९ ॥

सजन से प्रीत मोहिँ लागी । दरस को भयो अनुरागी ॥१॥
नहीँ बैराग मोहिँ आवै । साहेब के गुन निते गावै ॥२॥
अभरन भूषन तनै साजूँ । पिया को देखि हँस हुलसूँ ॥३॥
भया है गैब का डंका । चलो जहँ देस है बंका ॥४॥
बिना ऋतु फूल एक फूला । भँवर रँग देखि के भूला ॥५॥
तकत छबि टरै ना टारी । होय तिस बरन[1] बलिहारी ॥६॥
कहै धर्मदास कर जोरी । साहेब से अर्ज है मोरी ॥७॥

॥ शब्द १० ॥

साहेब तेरी देखौँ सेजरिया हो ॥ टेक ॥
लाल महल के लाल कँगूरा, लालिनि लागि किवरिया हो ॥१॥
लाल पलँग के लाल बिछौना, लालिनि लागि झलरिया हो ॥२॥

---

(१) रंग ।

लाल साहेब की लालिनि मूरत, लालि लालि अनुहरिया हो ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, गुरु के चरन बलिहरिया हो ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

साजन हमरे दरस सतगुरु के ॥ टेक ॥
अपने सजन को आवत देखूँ, दरसन करूँ नैन भरि भरि के ॥१॥
चरन धोइ चरनामृत लेहूँ, जूठन पाऊँ पेट भरि भरि के ॥२॥
नीचा कर्म काटि गुरु दीन्हा, चरन कँवल पै सीस धरि धरि के ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, भव उतरूँ सतनाम सुमिरि के ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

गुरु मोहिँ सजीवन मूर दई ॥ टेक ॥
ान लागि गुरदिच्छा दीन्हीँ, जन्म जन्म को मोल लई ॥१॥
ान दिन औगुन छूटन लागे, बाढ़न लागी प्रीति नई ॥२॥
ानिक सुंभ से मानिक उपजै, हीरा हंस से भेँट भई ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, दिल की दुर्मति दूर भई ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

पिया बिन मोहिँ नीँद न आवै ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजुली चमकै, ऊपर से मोहिँ झाँकि दिखावै ॥१॥
सासु ननद घर दारुनि आहैँ, नित मोहिँ बिरह सतावै ॥२॥
जोगिन ह्वै के मैँ बन बन ढूँढ़ूँ, कोऊ न सुधि बतलावै ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, कोइ नेरे कोइ दूर बतावै ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

पिया बिना मोहिँ नीक न लागै गाँव ॥ टेक ॥
चलत चलत मोरे चरन दुखित भे, आँखिन परिगै धूर ॥१॥
आगे चलूँ पंथ नहिँ सूझै, पाछे परै न पाँव ॥२॥
ससुरे जाऊँ पिया नहिँ चीन्है, नैहर जात लजाऊँ ॥३॥

इहाँ मोर गाँव उहाँ मोर पाही[1], बीचे अमरपुर धाम ॥४॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, तहाँ गाँव ना ठाँव ॥५॥

॥ शब्द १५ ॥

साँझ भई पिया बिन अकुलानी ॥ टेक ॥
देस देस ढूँढ़ि फिरि आई, लोक लोक मैं छानी ।
कोइ न खोजै पिय अपने को, झुंड की झुंड गुमानी ॥१॥
आतुर जाय पूछै सखियन से, कहो पिय रूप बखानी ।
निरंकार सब के मन भावै, सुनि सुनि भे गलतानी ॥२॥
पुनि अकुलाय भवन को लौटी, त्रिकुटी महल समानी ।
सोहं सब्द सत्त दरसावै, वाही के रूप लोभानी ॥३॥
धन सतगुरु जीवन के दाता, दीन्हा नाम निसानी ।
कहैं कबीर बहुत दिन बीता, धर्मनि तुम पहिचानी ॥४॥

॥ आरती का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

कैसे आरत करौं तिहारी । महा मलिन गति देँह हमारी ॥१॥
मैलहिं तें उपज्यो संसारा । मैं कैसे गुन गावों तुम्हारा ॥२॥
झरना झरै दसो दिस द्वारे । कस ढिंग आवों साहेब तुम्हारे ॥३॥
जो प्रभु देहु अगर की देँही । तब होवों मैं सब्द सनेही ॥४॥
मलयागिर में बसत भुवंगा । बिष अमृत रहै एकै संगा ॥५॥
तिनुका तोड़ दिया परवाना । तब हम पायो पद निर्बाना ॥६॥
धर्मदास कबीर बल गाजे । गुरु परताप आरती साजे ॥७॥

॥ शब्द २ ॥

आरत गुरु कबीर की कीजे । जा के सेव जुगो जुग जीजे ॥१॥
संतन दया कीन्ह अधिकारी । सतसंगत मिलि अधम उधारी ॥२॥

(१) दूसरे गाँव की खेती ।

जन्म अनेक बीति गयो मोरा। अब मैं दरसन पायो तोरा ॥३॥
अबके आरत सतगुरु चीन्हा। सुरत लगाय बंदगी कीन्हा ॥४॥
अजर अमर है तुम्हरी काया। धरमदास गुरु सरनी आया ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

आरति मोहिं तुम्हारी परम गुरु, आरति मोहिं तुम्हारी।
प्रातःकाल सकल बिधि पूरन, धारी साज सँवारी ॥१॥
नरियर पान बदाम छुहारा, लौंग लायची सारी।
भाव भक्ति से गुरू हिलोरा, संत मिले फल चारी ॥२॥
दयावंत धरनी पग धारे, हरषि साधु संसारी।
मेटे बंधन त्रास जिवन के, चिन्ता सकल निवारी ॥३॥
पूरन पुरुष सिँहासन राजे, सोभा बहु बिधि धारी।
आरति करैं संत सब गावैं, धरमदास बलिहारी ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

ऐसी आरति दियो लखाई। परखो जोति अधर फहराई ॥
धरती थंबन उदित अकासा। ता पर सूर करै परकासा ॥१॥
हीरा कोटि होय उँजियारी। बिना सुगंध पुहुप की बारी ॥२॥
चन्द्र लगन कीन्हा परकासा। चौदह जम जाके डरैं तरासा ॥
गहो निरच्छर निस्चै डोरी। धर्मराय से तिनुका तोरी ॥४॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। यह निज भेद कहौं परकासा ॥५॥

॥ शब्द ५ ॥

ऐसी आरत कहो समुझाई। जा सुमिरन तें काल नसाई ॥१॥
धरती थंब करो परकासा। चौदह जम जा की मानै त्रासा ॥२॥
अमलपच्छ भृङ्गी तन बासा। सो निज भेद करो परकासा ॥३॥
पवन पचासी नाम कहि लीजै। पाछे ज्ञान सिँहासन दीजै ॥४॥
सुनो कबीर कहै धर्मदासा। उदय दीप लौं करो प्रकासा ॥५॥

॥ शब्द ६ ॥

आरति बंदीछोर समरथ की । चरन कँवल चित राखु पुरुष की ॥१
आरति सोँ भूमी पग धारे । सतजुग में सत सब्द उचारे ॥२॥
आरति सोँ जग प्रगटे आई । त्रेता मंदर नाम कहाई ॥३॥
आरति सोँ मुख मंगल गाये । द्वापर करुनामय कहवाये ॥४॥
आरति सोँ जग बंधी आसा । कलजुग केवल नाम प्रकासा ॥५॥
चारो जुग धर प्रगट सरीरा । आरत गावै धर्मदास कबीरा ॥६॥

॥ शब्द ७ ॥

धरमदास आरती साजा । पाँच तत्त मुख बेद उचारा ॥१॥
पहिले तेज पवन अरु पानी । रहे निरंतर अंतरजामी ॥२॥
गगन जोति गरजै असमाना । देखो दृष्टि धुजा फहराना ॥३॥
कोटि ब्रह्म जहँ पढ़त पुराना । कोटि संभु धरैं उर ध्याना ॥४॥
कोटि बिष्नु बिनवैं कर जोरी । और देव सब तैं तिस कोरी ॥५॥
सेस सहसमुख निसु दिन गावैं । अस्तुति करत पार नहिँ पावैं ॥६॥
सतगुरु मिलैँ तो भेद बतावैं । पाँच तत्त ले अगम लखावैं ॥७॥
कहैँ कबीर हंस-पति राई । धरमदास आरति फल पाई ॥८॥

॥ शब्द ८ ॥

हंस उबारि अपन करि लीन्हा । संझा आरति सुकिरत कीन्हा ॥१॥
पहिले आरति अलख बिराजै । ओअं सोहं ध्यान लगावै ॥२॥
गगन मँदिल बिच फूल एक फूला । तरे भई डार उपर भयो मूल ॥३॥
अखंड बिराजै ता की छाया । लख चौरासी के फंद छुड़ाया ॥४॥
साख से उपजि सकल संसारा । लख चौरासी से होइ रहु न्यारा ॥५॥
धरमदास बिनवैं कर जोरी । गुरु प्रताप से आरति जोरी ॥६॥

॥ शब्द ९ ॥

संझा आरति नाम तुम्हारा । अनहद धुनि गुरु ज्ञान बिचारा ॥
तत का तेल काया की बाती । ब्रह्म अगिन अंदर धधकारी ॥

पाँचो बाती निरमल करि बारी । सुरति चँवर ले सन्मुख झारी ॥
प्रेम के पुहुप धूप धरो ध्याना । चित चंदन घसि अंग लगाना ॥
अद्भुत जोति अधर परगासा । आरति करै कबीर धर्मदासा ॥

॥ बिनती का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

गुरु पैयाँ लागौं नाम लखा दीजो रे ॥ टेक ॥
जनम जनम का सोया मनुवाँ, सब्दन मार जगा दीजो रे ॥१॥
घट अँधियार नैन नहिं सूझै, ज्ञान का दीप जगा दीजो रे ॥२॥
बिष की लहर उठत घट अंतर, अमृत बूँद चुवा दीजो रे ॥३॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे ॥४॥
धरमदास की अरज गुसाँईं, अब के खेप निभा दीजो रे ॥५॥

॥ शब्द २ ॥

भक्ति दान गुरु दीजिये देवन के देवा हो ।
चरन कँवल बिसरौं नहीं करिहौं पद सेवा हो ॥१॥
तिरथ बरत मैं ना करौं ना देवल पूजा हो ।
तुमहिं ओर निरखत रहौं मेरे और न दूजा हो ॥२॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि हैं बैकुंठ निवासा हो ।
सो मैं ना कछु माँगहूँ मेरे समरथ दाता हो ॥३॥
सुख सम्पति परिवार धन सुन्दर वर नारी हो ।
सुपनेहु इच्छा ना उठै गुरु आन तुम्हारी हो ॥४॥
धरमदास की बीनती साहेब सुनि लीजै हो ।
दरसन देहु पट खोलि कै आपन करि लीजै हो ॥५॥

॥ शब्द ३ ॥

साहेब साहेबी तन हेरो ॥ टेक ॥

चंच पंख बिन जटा पखेरू, मम गति समझ सबेरो ।
अब जनि तजो मोहिं यह खंडा, तुम सत लोक बसेरो ॥ १ ॥
निस बासर मोहिं संसय व्यापै, काम क्रोध मद घेरो ।
या से नाम लेन नहिं पाऊँ, धृग जीवन जग मेरो ॥ २ ॥
प्रभु पद भिन्न भयो मैं जब से, देंह धरे बहुतेरो ।
त्रिबिधि ताप दुख सहे निरंतर, कबहुँ न भयो सुखेरो ॥ ३ ॥
मम हित जानि प्रान-पति सतगुरु, जुगन जुगन तुम टेरो ।
मैं अचेत प्रीति मोह बस, तुम तजि भयो अनेरो ॥ ४ ॥
मैं हौं जीव तुम्हार दया-निधि, आदि अंत को चेरो ।
अब मोहिं लेहु छुड़ाइ काल से, औगुन मेटो मेरो ॥ ५ ॥
बंदी-छोर सुनो करुना-मय, करो हिये बिच डेरो ।
धर्मदास पर दाया कीजे, चौरासी से फेरो ॥ ६ ॥

॥ शब्द ४ ॥

साहेब दीनबंधु हितकारी ॥ टेक ॥

कोटिन ऐगुन बालक करई, मात पिता चित एक न धारी ॥१॥
तुम गुरु मात पिता जीवन के, मैं अति दीन दुखारी ॥ २ ॥
प्रनत-पाल करुना-निधान प्रभु, हमरो ओर निहारी ॥ ३ ॥
जुगन जुगन से तुम चलि आये, जीवन के हितकारी ॥ ४ ॥
सदा भरोसे रहूँ तुम्हारे, तुम प्रतिपाल हमारी ॥ ५ ॥
मोरे तुम हीं सत्त सुकृत हो, अंतर और न धारी ॥ ६ ॥
जानत हो जन के तन मन की, अब कस मोहिं बिसारी ॥ ७ ॥
को कहि सकै तुम्हारी महिमा, केहि न दियो पद भारी ॥ ८ ॥
धरमदास पर दाया कीन्हीं, सेवक अहौं तुम्हारी ॥ ९ ॥

॥ शब्द ५ ॥

साहेब मेटो चूक हमारी ॥ टेक ॥

बार बार मोहिँ डंड भयो है, चूक भई अति भारी।
अब हम आये निकट तुम्हारे, अब मो तनहिँ निहारी ॥१॥
करुनामय तुम नाम धराये, तुम समरथ अब मेरो।
ऐसी बिपति भई मोहिँ ऊपर, कोइ ना हीत[1] हमारो ॥२॥
तरसत जीव रहै निस बासर, जानि जनहिँ तुम दौरो।
अब की चूक छिमा कर साहेब, अब सनमुख है हेरो ॥३॥
तुम सतगुरु सकल सुख-दाता, सब्द पान दे तारो।
धरमदास बिनवै कर जोरी, करौं बंदगी तेरो ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

सुरति पर सतगुर धरि दियो बाढ़ ॥ टेक ॥

घर माँ रहौं रहन नहिँ पावौं,
घर के लोग मोहिँ देहिँ निकार ॥१॥
बाहर जावँ डाइन इक लागै,
सुनि पावै जिय डाहै मार ॥२॥
ऐसी बाढ़ धरो मोरे साहेब,
जहँ मारौं तहाँ पल्ले पार ॥३॥
धरमदास पर दाया कीजै,
साहेब कबीर दुख मेटनहार ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

बंदी छोर बिनती सुनि लीजै ॥ टेक ॥

कपट कुटिल अपराधी द्रोही, ठहरावो मन निस्चै।
नाम तुम्हारा अधम उधारन, ता की दिच्छा दीजै ॥१॥

---

(१) हितकारी।

पाप पुन्न नहिँ जाँचन कीजै, काटि फंद अब दीजै।
माँगूँ अपन सुभाव दयानिधि, सुनि अनुमान न कीजै ॥२॥
बिषे बिनास रहूँ निसु बासर, यह तन छिन छिन छीजै।
साठ जन्म को हौं अपराधी, अबकी छिमा प्रभु कीजै ॥३॥
सतगुरु नाम मुनींद्र कहाये, साहेब कबीर सुनि लीजै।
धरमदास बिनवै कर जोरी, काटि चौरासी दीजै ॥४॥

॥ शब्द ८ ॥

कब तुम मिलिहो कंथ कबीर।
धर्मदास पर दाया कीजै, हंस लगावो तीर ॥१॥
भक्ति अचल औ दृढ़ बैरागा, पूरन ज्ञान गँभीर।
जती सती संतोषी तुमहीँ, सब के दाता धीर ॥२॥
तुम प्रताप परवाह न केहु को, सागर सलिता नीर।
एक बुंद दयाल मोहिँ दीजै, जाय जीव की पीर ॥३॥
महा कठोर कठिन मन मेरो, हरो ताहि की भीर।
कामी क्रोधी झूठा लंपट, धार्यो अधम सरीर ॥४॥
सुक्ख करन और दुक्ख हरन तुम, ऐसे मत के थीर।
ज्ञानमंडन भर्मखंडन, दया सिन्धु कबीर ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

साहेब बूड़त नाव अब मोरी ॥ टेक ॥

काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ॥१॥
कपट की भँवर परतु है बहुतै, वा मेँ बेड़ा अटको।
काल फाँस लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥२॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फंद जिव तारी।
कहैँ कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरन उबारी ॥३॥

॥ शब्द १० ॥

बिन दरसन भइ बावरी, गुरु द्यो दीदार ॥ टेक ॥
ठाढ़ि जोहौं तोरी बाट म, साहेब चलि आवो ।
इतनी दया हम पर करो, निज छबि दरसावो ॥ १ ॥
कोठरी रतन जड़ाव की, हीरा लागे किवार ।
ताला कुंजी प्रेम की, गुरु खोलि दिखावो ॥ २ ॥
बंदा भूला बंदगी, तुम बकसनहार ।
धर्मदास अरजी सुनो, भव पार करावो ॥ ३ ॥

॥ शब्द ११ ॥

दीना-नाथ दयाल, भक्त की पच्छ करौ ।
सरन आये की लाज, साहेब जन की करौ ॥ १ ॥
नौ दरवाजे विकार, धार नौका बगै[1] ।
मेरि सुरत नहीं ठहराय, लगन कैसे लगै ॥ २ ॥
पाँच तत्त गुन तीन का, आदर साजिया ।
जम राखै बिलमाय, तो फंद न फंदिया ॥ ३ ॥
तिर्गुन फाँस का फंदा, माया मद जाल में ।
भवसागर के बीच, महा जंजाल में ॥ ४ ॥
भक्ति मुक्ति देव दान, दया जन पर करौ ।
नौका पार लगाय, दास अपनो करौ ॥ ५ ॥
साहेब कबीर बंदी-छोर, अरज एक मानिये ।
धर्मनि पतित उबारि, सरन में आनिये ॥ ६ ॥

॥ शब्द १२ ॥

चरन छाँड़ि प्रभु जावँ कहाँ, मोरे और न कोई ।
जग में आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥ १ ॥

(१) बगदे, बेठिकाने बहै ।

मात पिता हित बंधु तुम, का से दुख रोई।
सब कछु तुम्हरे हाथ है, तुम्हरे मुख जोही ॥२॥
गुन तो मोरे है नहीं, औगुन बहुतेरे।
ओट लई तुम नाम की, राखो पत सोई ॥३॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिँ कोई ॥४॥
मैँ गरजी अरजी करौँ, मरजी जस होई।
अरज बिपति लिखौँ आपनी, राखौँ नहिँ गोई ॥५॥
धरमदास सत साहेबी, घट घटहिँ समोई।
साहेब कबीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥६॥

॥ शब्द १३ ॥

साँईं मैं असल गुलाम तिहारा ॥ टेक ॥
काया नगर बन्यो अति सुन्दर, मोह को लग्यो बजारा।
कुमति कलोल करै दसहों दिसि, लोभ को ठुक्यो नगारा ॥१॥
मोह समुन्दर भरे अपरबल, भँवर भँवै[१] अति भारा।
काम क्रोध का लहर उठतु है, केहि बिधि होय निवारा ॥२॥
पाँच के ऊपर पचिस महतिया, इन परपंच पसारा।
मन अदली जहँ अदल चलावे, कहा करे जीव बिचारा ॥३॥
ना मोरे नाव नाहिँ खेवटिया, डर लागे मोहिँ भारी।
चौदह लोक में कोइ नहिँ दीसे, तुम गुरु पार उतारी ॥४॥
धरमदास की यही बीनती, उरझे को निर्वारो।
साहेब कबीर मिले गुरु समरथ, हम से अधम उबारो ॥५॥

---

(१) घूमै।

॥ शब्द १४ ॥

मैं तो तोरे भजन भरोसे अबिनासी ॥ टेक ॥

तीरथ बरत कछू नहिँ करहूँ, बेद पढ़ौं नहिँ कासी ॥१॥
जंत्र मंत्र टोटका नहिँ जानौं, निसु दिन फिरत उदासी ॥२॥
यहि घट भीतर बधिक बसत है, दिये लोभ की टाटी ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरो, सतगुरु चरनन दासी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब बंदी-छोर हमारे ॥ टेक ॥

ठाढ़े बैठे चलत निहारे, जागत साँझ सबारे।
करुना-सिंधु दया के आगर, नैनन के उँजियारे ॥१॥
बोलत बचन मीठ बहु लागै, पूरन पुरुष पियारे।
उनकी रहनि गहनि जब पैहो, होइ रहु सब से न्यारे ॥२॥
है बहु ज्ञान ध्यान बहुतेरो, खोलो गगन किवारे।
दया सरूप बसे सिंधू में, हीरा लाल निकारे ॥३॥
साहेब कबीर सदा के सतगुरु, हंसन के रखवारे।
धरमदास पर दाया कीन्हा, आया सरन तुम्हारे ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

साहेब मोरी ओर निहारो।

परजा पुत्र अहौं मैं साहेब, बहुत बात मैं टारो ॥१॥
हौं मैं कोटि जनम को पापी, मन बच करम असारो।
एको कर्म छुटे ना कबहूँ, बहु बिधि बात बिगारो ॥२॥
हौं अपराधी बहुत जुगन को, नइया मोर उबारो।
बंदीछोर सकल सुख-दाता, करुनामय करत पुकारो ॥३॥

सीस चढ़ाय पाप की मोटरी, आयो तुम्हरे द्वारो ।
को अस हमरे भार उतारै, तुमहीँ हेतु[1] हमारो ॥ ४ ॥
धरमदास यह बिनती बिनवै, सतगुरु मो को तारो ।
साहेब कबीर हंस के राजा, अमर लोक पहुँचावो ॥ ५ ॥

॥ शब्द १७ ॥

साहेब मोरी बहियाँ सम्हारि गही ॥ टेक ॥
गहिरी नदिया नाव झाँझरी, बोझा अधिक भई ।
मोह लोभ की लहर उठत है, नदिया झकोर बही ॥ १ ॥
तुमहि बिगारो तुमहिँ सँवारो, तुमहिं भँडार भरी ।
जब चाहो तब पार लगावो, नहिँ तो जात बही ॥ २ ॥
कुमति काटि के सुमति बढ़ावो, बल बुधि ज्ञान दई ।
मैँ पापी बहु बेरी चूकूँ, तुम मेरी चूक सही ॥ ३ ॥
धरमदास सरन सतगुरु के, अब धुनि लाग रही ।
अमर लोक में डेरा परिगै, समरथ नाम सही ॥ ४ ॥

॥ शब्द १८ ॥

साहेब कौन क़सी घर तेरो ॥ टेक ॥
भूखे अन्न पियासे पानी, कपड़ा से तन घेरो ।
जो कछु न्यामत सबै महल में, खरच खजाना ढेरो ॥ १ ॥
खाक से पाक कियो पल माहीँ, हे समरथ बल तेरो ।
भव से काढ़ि कियो तरनी[2] पर, खेइ लगावो सबेरो ॥ २ ॥
रहे न घाम छाँह दुनिया में, रहे न जम को चेरो ।
राव से रंक रंक से राजा, छिन में बाजत तूरो ॥ ३ ॥
मानो सत्त झूठ जनि जानो, सत्त बचन है पूरो ।
धर्मदास चरनन पर बिनवै, तुम गति सब भरपूरो ॥ ४ ॥

(१) हितकारी । (२) नाव ।

॥ शब्द १९ ॥

साहेब खेइ लगावो पारा ॥ टेक ॥

असी कोस में झील अरु झाँकर, असी कोस अँधियारा ।
असी कोस बैतरनी नदिया, जहँवाँ हंस उतारा ॥ १ ॥
बड़े बड़े सीकारी जोधा, आगे पग है डारा ।
खाल खैंचि जम भुसा भरावे, ऐंचि लेहि जस आरा ॥ २ ॥
लेखा माँगे जम फुरमावे, तीन लोक ले डारा ।
उपजत बिनसत जनम बीतिगे, चौरासी की धारा ॥ ३ ॥
गगन मँदिल में सतगुरु बोले, सुनि ले सब्द हमारा ।
धरमदास चरनन पर बिनवे, अब को अरज हमारा ॥ ४ ॥

॥ शब्द २० ॥

अब मोहिं दरसन देहु कबीर ॥ टेक ॥

तुम्हरे दरस से पाप कटत हैं, निरमल होत सरीर ॥ १ ॥
अमृत भोजन हंसा पावे, सब्द धुनन की खीर ॥ २ ॥
जहँ देखौं जहँ पाट पटंबर, ओढ़न अंबर चीर ॥ ३ ॥
धरमदास की अरज गोसाँईं, हंस लगावो तीर ॥ ४ ॥

॥ शब्द २१ ॥

साहेब मोहिं दरसन दीजे हो । करुना-निधि मेहर करीजे हो ॥
पपिहा के चित स्वाँति बसै, भावे नहिं जल दूजा हो ।
जैसे काग जहाज चढ़े, वा को और न सूझा हो ॥ १ ॥
बार बार बिनती करूँ, मेरी अरज सुनीजे हो ।
भवसागर से काढ़ि के, अपना करि लीजे हो ॥ २ ॥
सत्त लोक से सुरत करी, तब जग में आये हो ।
जम से जीव छोड़ाइ के, धर्मनि मन भाये हो ॥ ३ ॥

॥ शब्द २२ ॥

मोर मन लागा साहेब से, बंदी छोर कबीरा ॥ टेक ॥

सतगुरु सरनै मैं गई, सब दुख हरि लीन्हा ।
करम भरम सब मेटि के, निरमल करि दीन्हा ॥१॥
तीन लोक के बीच में, जम कातर दीन्हा ।
ता से मोहिँ छुड़ाइ के, आपन करि लीन्हा ॥२॥
सतगुरु सब्द सुनाइ के, पारस करि दीन्हा ।
कागा बरन मिटाइ के, हंसा करि लीन्हा ॥३॥
काम क्रोध सब त्यागि के, बन हंस गँभीरा ।
सब्द हमारा मानि ले, गुरु कहत कबीरा ॥४॥
धरमदास की बीनती, संतन महँ डेरा ।
जाति बरन कुल त्यागि के, सत लोक बसेरा ॥५॥

॥ शब्द २३ ॥

साहेब कौन देस मोहिँ डारा ॥ टेक ॥

वह तो देस अमर हंसन को, येहि जग काल पसारा ॥१॥
देवहु सब्द अजर हंसन को, बहुरि न ह्वै अवतारा ॥२॥
निरगुन सरगुन दुंद पसारा, परि गये काल की धारा ॥३॥
जहाँ देस है सत्त पुरुष का, अजर अमी का अहारा ॥४॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, अबकी अरज हमारा ॥५॥

॥ शब्द २४ ॥

साहेब लेइ चलो देस अपाना ॥ टेक ॥

जम की त्रास सही नहिँ जाई, केहि बिधि धरौं मैं ध्याना ॥१॥
माया मोह भरम की मोटरी, यह सब काल कलपना ॥२॥
माया मोह भरम सब काटो, दीजै पद निरबाना ॥३॥
अमर लोक वह देस सुहेला, हंसा कीन्ह पयाना ॥४॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, आवागवन नसाना ॥५॥

॥ शब्द २५ ॥

तुम सतगुरु हम सेवक तुम्हरे ॥ टेक ॥
जो कोइ मारै औ गरियावै, दाद फिरियाद करब तुमहीं से ॥१॥
सोवत जागत के रछपाला, तुमहीं छाँड़ि भजौं नहिं औरे ॥२॥
तुम धरनीधर सब्द अनाहद, अमृत भाव करो प्रभु सगरे ॥३॥
तुम्हरी बिनय कहाँ लगि बरनौं, धरमदास पद गहे हैं तुम्हरे ॥४॥

॥ शब्द २६ ॥

जमुनियाँ की डारि मोरी तोड़ देव हो ॥ टेक ॥
एक जमुनियाँ के चौदह डारि, सार सब्द लेके मोड़ देव हो ॥१॥
काया कंचन अजब पियाला, नाम बूटी रस घोर देव हो ॥२॥
सुरत सुहागिन गजब पियासो, अमृत रस में बोर देव हो ॥३॥
सतगुरु हमरे ज्ञान जौहरी, रतन पदारथ जोरि देव हो ॥४॥
धरमदास की अरज गुसाँईं, जीवन की बंदी छोर देव हो ॥५॥

॥ शब्द २७ ॥

मिहरबान है साहेब मेरा। दिल भर दरसन पाऊँ तेरा ॥१॥
तुम दाता मैं सदा भिखारी। देव दीदार जाउँ बलिहारी ॥२॥
करूँ बंदगी खिजमत दीजै। बकसो चूक दया बहु कीजै ॥३॥
सेवक तें बिगरै सौ बारा। सतगुरु साहेब लेव उबारा ॥४॥
औगुन सेवक साहेब जानै। साहेब मन में ना गिल्यानै ॥५॥
धर्मदास लइ तुम्हरि पनाह। अगले पछिले बकस गुनाह ॥६॥

॥ शब्द २८ ॥

बाजा बाजा रहित[1] का, पड़ा नगर में सोर।
(मेरे) सतगुरु संत कबीर हैं, नजर न आवै और ॥१॥

---

(१) मुक्ति, उद्धार।

भूमी पर पग धरत हो, सुनो संत मतधीर।
माथ नाय बिनती करूँ, दर्सन देव कबीर ॥२॥
घाट बाट औघट महीँ, मोहिँ कबीर की आस।
धर्मनि सुमिरै नाम गुरु, कभी न होय बिनास ॥३॥

॥ शब्द २९ ॥

अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥ टेक ॥
सेवक लिये प्रेम जल झारी, खरिका ब्रह्म गियान ॥१॥
भाव भक्ति सोँ बीरा लीजे, संतन जीवन प्रान ॥२॥
अमी उगाल दास को दीजे, जन को परम कल्यान ॥३॥
हृदय कमल बिच पलँग बिछाऊँ, पौढ़ैं पुरुष पुरान ॥४॥
चरन कमल की सेवा करहूँ, दासा-तन परवान ॥५॥
सुरत को बेनियाँ डोलाऊँ ठाढ़ी, इक टक लाऊँ ध्यान ॥६॥
धरमदास पर दाया कीजे, पूरन पद निरबान ॥७॥

॥ भेद का अंग ॥

॥ शब्द १ ॥

धर्मनि वा देस हमारो बासा, जहँ हंसा करै बिलासा ॥टेक॥
सात सुन्न के ऊपर साहेब, सेतै सेत निवासा।
सदा अनंद रहै वा देसा, कबहुँ न लगै उदासा ॥१॥
सूरज चंद दिवस नहिँ रजनी, नाहीँ धरनि अकासा।
ऐसा अमर लोक है अवधू, केवला फरै बारामासा ॥२॥
ब्रह्मा बिष्नु महेसुर कहिये, छके जोति के पासा।
चौथा लोक बसै जम चौथा, ये सब काल तमासा ॥३॥
उहाँ के गये बहुरि ना अइहो, आवागवन भय नासा।
ब्रह्म अखंडित साहेब कहिये, आपु में आपु प्रगासा ॥४॥

कहैं कबीर सुनो हो धर्मनि, छाँड़ो खल के आसा ।
अमृत भोजन हंसा पावै, बैठि पुरुष के पासा ॥ ५

॥ शब्द २ ॥

केहि बिधि प्रीतम पाइये, गुरु राह बतावो ॥ टेक ॥
अरध उरध बिच बागिया, तहँ सुरति लगावो ।
अष्ट कँवल दल पाँखुरी, उन को बिहसावो[१] ॥ १ ॥
इँगला पिँगला दोइ है, त्रिकुटी मन लावो ।
आपन रैयत बसि करो, बैठे अदल चलावो ॥ २ ॥
छज्जा ऊपर बैठि कै, फिर संख बजावो ।
सुखमनि हीरा सोधि कै, बाहर चढ़ि आवो ॥ ३ ॥
कहैं कबीर धर्मदास से, पद गहु निरबाना ।
मनुष जनम दुर्लभ अहै, तन तपन बुझावो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३ ॥

चेतो हंसा चेतो कोई, अगम सँदेसा लाये हो ।
हम हैं हजूरी अविगति ब्रह्म के, हंस उबारन आये हो ॥ १ ॥
सही छाप सूरति मुख बानी, जंग में आनि सुनाये हो ।
जीव दुखित देखा संसारा, तेहि कारन पठवाये हो ॥ २ ॥
आवागवन में सब जिव अरुझे, इस्थिर घर नहिं पाये हो ।
आदि अंत इस्थिर लखावन को, समरथ मोहिं पठाये हो ॥ ३ ॥
अंडज खानी माया बनाई, पिंडज ब्रह्मा सिरजी हो ।
उष्मज खानि बिष्नु जो कीन्ही, अस्थावर सिव साजी हो ॥ ४ ॥
ये बटमार भये या जिव के, सबै राखि भरमाई हो ।
चेतन अंस पुरुष की भाई, चारो माहिँ भुलाई हो ॥ ५ ॥

---

(१) खिलावो ।

बिन सतगुरु कोइ पार न पावै, फिरि फिरि जोनी भूला हो ।
नौ सोहंग परे जिनहीं से, सोई पुरुष निज मूला हो ॥६॥
तीन देँह उनहीँ से उपजी, कारन सुछम स्थूला हो ।
कारन देँह में सहज सुरति है, औ अंकूर पसारा हो ॥७॥
सुछम देँह मेँ ओहं सोहं, इनको ख्याल अपारा हो ।
स्थिर देँह में अंस है अच्छर, इच्छा उनसे धारा हो ॥८॥
ते अच्छर तेँ जोति निरंजन, सबको करत अहारा हो ।
ते जोती में तिन[1] देव लागे, जाके सृष्टि पसारा हो ॥९॥
सात सुन्न दोइ बेसुन कहिये, दसवाँ धाम अखंडा हो ।
समरथ सब्द हमरो अस्थाना, और सकल ब्रह्मंडा हो ॥१०॥
सोरह सुत तेही के माहीँ, तेहि बिच पाँचो अंडा हो ।
अमर लोक में पुरुष बिदेही, निगम न पावै पारा हो ॥११॥
उनकी उपमा कहँ लगि बरनौँ, मुख तेँ होय न पारा हो ।
कोटिन सूर चन्द्र तारागन, एक रोम पर वारा हो ॥१२॥
सेत सिंघासन सेत छत्र सिर, सेतहि हंस पियारा हो ।
सेत भूमि जहँ सेत बृच्छ है, सेतहि कमल सुहेला हो ॥१३॥
पारस पान लेहु तुम सुकिरित, तब देखो दरबारा हो ।
कहैँ कबीर सुनो धर्मदासा, तुम से होइ निरधारा हो ॥१४॥

॥ शब्द ४ ॥

गगन पिय बंसी फेरि बजावो ॥ टेक ॥

भँवर गुफा से उठत बुलबुला, सो अंजन पिय नैन लगावो ॥१॥
जो बंसी सुर नर मुनि मोहे, सो बंसी पिय मोहिँ सुनावो ॥२॥
आनो कूंजी खोलो ताला, मोहनि मूरति मोहिँ दिखावो ॥३॥
धरमदास विनवै कर जोरी, चरन कँवल तरे मोहिँ लगावो ॥४॥

---

(१) तीन ।

॥ शब्द ५ ॥

झरि लागै महलिया, गगन घहराय ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजुली चमकै,
लहर उठै सोभा बरनि न जाय ॥१॥
सुन्न महल से अमृत बरसै,
प्रेम अनँद होइ साध नहाय ॥२॥
खुली किवरिया मिटी अँधियरिया,
धन सतगुरु जिन दिया है लखाय ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
सतगुरु चरन मेँ रहत समाय ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

हमैँ एक अचरज जानि पड़ै ॥ टेक ॥
जल भीतर इक बृच्छा उपजै, ता मेँ अगिन जरै ।
ठाढ़ी साखा पवन झकोरै, दीपक जोति बरै ॥१॥
माथे पर तिरबेनी बहत है, चढ़ि ऊपर असनान करै ।
लरजै गरजै दामिनि दमकै, कामिनि कलस भरै ॥२॥
मट्टी का गढ़ कोट बना है, जा मेँ फौज लड़ै ।
सूर बीर कोउ नजरि न आवै, नाहक रार करै ॥३॥
साहेब अमर मरै ना कबहूँ, नाहक सोच करै ।
धरमदास या पद को गावै, फिर कबहूँ न टरै ॥४॥

॥ शब्द ७ ॥

आठ चाम के गुरिया रे, मन माला फेर सबेरिया ॥टेक॥
अमी रस निकसत राग, फाग तंत झनकरिया ।
नाम से और सौदा नहिँ भावै, पिय की मौज लहरिया ॥१॥

मिलहु सत्त सुकृत रस भोगो, होवहु प्रेम पियरिया ।
मीच होहु तन मन धन जारो, जैसे सती सिँगरिया ॥ २ ॥
नव दिसि द्वार तपत तहँ देखो, दसवेँ खोल किवरिया ।
पाँच रागिनी झुमक पचीसो, छठएँ धरम नगरिया ॥ ३ ॥
अजपा लागि पागि रहै डोरी, निरखो सुरति सुँदरिया ।
धरमदास के साहेब कबीरा, लै पहुँचावो सत्त नगरिया ॥ ४ ॥

॥ शब्द ८ ॥

बिरले साधू पावै हो, रतनन कै माला ॥ टेक ॥
मुलुक मँडल चौकी बनी, पूरन धर्मसाला ।
वोहि में आपु बिराजै हो, प्रभु दीनदयाला ॥ १ ॥
चाँद सुरज मानिक भये, करु सुरति कै धागा ।
हर दम हर दम फेरो हो, अंतर गुरु माला ॥ २ ॥
पाँच तत्त कै पिंजरा हो, हीरा लागे आस ।
वोहि मेँ साहेब रमि रह्यो. कोटिन भानु प्रकास ॥ ३ ॥
नर नारी में ढूढ़ो हो, घट घट मेँ माला ।
कहैं कबीर धर्मदास से, निज होत निहाला ॥ ४ ॥

॥ शब्द ९ ॥

खेलत रहलोँ बाबा चौवरिया.
आइ गये अनहार[1] हो ।
राँध परोसिन भेँटहूँ न पायोँ,
डोलिया फँदाये लिये जात हो ॥ १ ॥
डोलिया से उतरो उत्तर दिस धनि,
नैहर लागल आग हो ।
सब्दै छावल साहेब के नगरिया,
जहँवाँ लिआये लिये जात हो ॥ २ ॥

(१) ले जाने वाला ।

भादौं नदिया अगम बहै सजनी,
सूझै वार न पार हो।
अब की बेर साहेब पार उतारो,
फिर न आइब संसार हो ॥ ३ ॥
डोलिया से उतरो साहेब घर सजनी,
बैठो घूँघुट टार हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा,
पाये पुरुष अपार[1] हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द १० ॥

अचरज ख्याल हमारे देसवा ॥ टेक ॥
हमरे देसवा बादर उमड़े, नान्हो परै फोहरिया।
बैठि रहौं चौगान चौक में, भींजै हमरी देँहिया ॥ १ ॥
हमरे देसवा उर्धमुख कुँइया, साकर वा की खोरिया।
सुरत सुहागिनि जल भरि लावै, बिन रसरी बिन डोरिया ॥ २ ॥
हमरे देसवा चूनरि उपजे, मँहगे मोल बिकइया।
की तो लेइहैं सतगुरु साहेब, की कोइ साध सुजनिया ॥ ३ ॥
हमरे देसवा बाजा बाजे, गैबी उठे अवजवा।
साहेब धरमदास मगन ह्वै, बैठे तखत परगसवा ॥ ४ ॥

॥ शब्द ११ ॥

सब्द सिँहासन पाट में, तुम हंसा बैठो जाई हो ॥ टेक ॥
कौन नाम मुक्तामनी हो, कौन नाम वे हंस।
कौन नाम वे पुरुष हैं हो, कौन नाम वे अंस ॥ १ ॥
अपर नाम मुक्तामनी हो, अग्र नाम वे हंस।
ज्ञान नाम वे पुरुष हैं हो, सुरति नाम वे अंस ॥ २ ॥

(१) एक लिपि में "अपार" की जगह "पुरान" है।

मूल दीप निज दीप है हो, तुमहिँ सुनो हम पाँह ।
बैठि हंस उबारिये हो, सोहंगम के बाँह ॥ ३ ॥
जम्बू दीप के हंसा भाई, पाँजी बैठो आय ।
कहैँ कबीर धर्मदास से, तुम लाओ बाँह चढ़ाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द १२ ॥

बुढ़िया ने काता सूत, जोलहवा ने बीना हो ।
दरजी ने टुक टुक कीन्ह, दरद नहिँ जाना हो ॥ १ ॥
भेड़ी चरावत बाघ, मूस रखवारा हो ।
मेँगुची[1] ने बाँधा ताल, सिंह के टाटा हो ॥ २ ॥
गोड़िया[2] पसारा जाल, ऊँट एक बाझा हो ।
दुलहिनि के सिर मौर, बिलारी साजा हो ॥ ३ ॥
भाँड़ा गढ़त कोँहार, मास दस लागा हो ।
छिनहिँ मेँ जात बिलाइ, बिलँब नहिँ लागा हो ॥ ४ ॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहिँ हो ।
कहैँ कबीर धर्मदास, अमर पद पावहिँ हो ॥ ५ ॥

॥ शब्द १३ ॥

मैं ब्योपारी नाम का, हाटे चल भाई ॥ टेक ॥

जस कुम्हरा के चाक घुमै, वैसे नर घूमै ।
इँगल पिँगल के मद्ध मेँ, जिन पवन चलाई ॥ १ ॥
बिन रसना रटना करै, नहिँ जीभ डोलाई ।
कसि के बाँधो कामदेव, तब अलख लखाई ॥ २ ॥
पूरब दिस को जाइ कै, खिरकी खोलवावो ।
तिरवेनी के घाट पर, हंसा नहवावो ॥ ३ ॥

---

(१) मेँढकी । (२) कहार, धीमर ।

तीन लोक दसवों दिसा, जम रोके द्वारा।
कहैं कबीर धर्मदास से, हंसा समुझावो ॥ ४ ॥

॥ शब्द १४ ॥

सुकृत फूल गुलाब को, सब घट रह्यो समाय।
कहो कैसे कर पाइये, गुरु बिन लख्यो न जाय ॥ १ ॥
तीन त्रिकुट के ऊपरे, फूल सोहंगम फूल।
जहाँ रहो आसन धर्म को, बिन अच्छर निज मूल ॥ २ ॥
चार जोजन के ऊपरे, पुरुष बिदेही पूर।
जगर मगर वो नगर है, बाजै अनहद तूर ॥ ३ ॥
अपने ढिगे हम खड़े, सतगुरु दियो बताय।
खिड़की खोल देखाइया, राह गगन की जाय ॥ ४ ॥
कहैं कबीर धर्मदास से, परगट दियो जनाय।
जो हंसा चढ़ि जावही, नहिं पुनि आवै जाय ॥ ५ ॥

॥ शब्द १५ ॥

हीरा झलके द्वार पर, निरखै कोइ सूरा हो ॥ टेक ॥
जिमीं आसन है संत को, बैठे इहि धीरा हो।
सुन्न समाधि लगाइ के, पहुँचे वहि तीरा हो ॥ १ ॥
बाजै बिरहिन बाँसुरी, सुनि के गइ पीरा हो।
आठ पहर नौबत झरै, अति गरुअ गँभीरा हो ॥ २ ॥
गंग जमुन के बीच में, एक झिरहिर नीरा हो।
पूरब से पच्छिम भये, अति गगन गँभीरा हो ॥ ३ ॥
यह हीरा अनमोल है, सब के घट पूरा हो।
कहहिं कबीर धर्मदास से, पायो पद पूरा हो ॥ ४ ॥

॥ मंगल ॥

॥ शब्द १ ॥

सतगुरु के उपदेस, फिरो धन बावरी ।
उठि चलो आपन देस, इहै भल दाव री ॥१॥
हम कहि दिया है सनेस, तुम्हारे पीव का ।
बिनु समुझे नहिँ काज, आपने जीव का ॥२॥
जुगन जुगन हम आइ, कहा समुझाइ के ।
बिनु समुझे धनि परिहौ, काल मुख जाइ के ॥३॥
काम क्रोध मद लोभ, छाँड़ु सब दुंद रे ।
का सोवै दिन रैन, बिरहिनी जागु रे ॥४॥
भव सागर की आस, छाँड़ु सब फंद रे ।
फिरि चलु आपन देस, यही भल रंग रे ॥५॥
सुन सखि पिय के रूप, तो बरनत ना बने ।
अजर अमर तो देस, सुगँध सागर भरे ॥६॥
फूलन सेज सँवार, पुरष बैठे जहाँ ।
ढुरै अग्र के चँवर, हंस राजै जहाँ ॥७॥
कोटिन भानु अँजोर, रोम एक मेँ कहा ।
ऊगे चन्द्र अपार, भूमि सोभा जहाँ ॥८॥
सेत बरन वह देस, सिँहासन सेत है ।
सेत छत्र सिर धरे, अभय पद देत है ॥९॥
करो अजपा कै जाप, प्रेम उर लाइये ।
मिलो सखी सत पीव, तो मंगल गाइये ॥१०॥
जुगन जुगन अहिवात[1], अखँड सो राज है ।
पिय मिले प्रेमानन्द, तो हंस समाज है ॥११॥

---

(१) सोहाग ।

कहैं कबीर पुकार, सुनो धर्मदास हो।
हंस चले सतलोक, पुरुष के पास हो ॥१२॥

॥ शब्द २ ॥

खोजहु संत सुजान सो मारग पीव को।
समुझि सब्द देहु स्रवन, मूल जहँ जीव को ॥१॥
भव सागर अगम अथाह, लहर बिकरार है।
कठिन है पाँचो[1] मार्ग, बिचे जम धार है ॥२॥
सिव संकर औ ब्रह्मा, पार न पावहीं।
यह बहिया बलजोर, संत पार लगावहीं ॥३॥
देहिँ नाम निज डोरि, तो दुख बिसरावहीँ।
बिन जल लहर अनूप, मोती झलकावहीँ ॥४॥
मारग पंथ सिधार, तो आरति साजहीँ।
देहिँ छत्र उँजियार, तो लोक सिधावहीँ ॥५॥
बैठे अनहद महल, प्रेम गुन गावहीँ।
सँग में सुमति सयानी, तो नेह लगावहीँ ॥६॥
सतगुरु जग में आइ, तो जीव चेताइया।
सार सब्द लखवाइ, तो लोक पठाइया ॥७॥
का लै पान खियाउँ, तो तिनका तोरही।
कवन सब्द की ओट, सो नरियर मोरही ॥८॥
संत अंक लिखि दीन्ह, तो पान खियावही।
सार सब्द की ओट सो, नरियर मोरही ॥९॥
नरियर भेद अगम्म, बंस जन मोरही।
कहैं कबीर धर्मदास, जिवन बँदि छोरही ॥१०॥

---

(१) पंच दूत।

॥ शब्द ३ ॥

सतगुरु सनमुख बैठि के, मंगल गाइये।
मन बच क्रम करि ध्यान, चरन चित लाइये ॥१॥
मंगल एक अनूप, संत जन गाइये।
उपजत आतम ज्ञान, प्रेम पद पाइये ॥२॥
चंदन अँगना लिपाइ के, चौक पुराइये।
मोतियन थार भराइ के, कलस धराइये ॥३॥
सतगुरु बिप्र बोलाइ के, लगन सोधाइये।
हीरा हंस बिठाइ के, नाम सुनाइये ॥४॥
जो कल भगति बिबेक, प्रेम पद पाइये।
सजन सहित परिवार, तो लोक सिधाइये ॥५॥
मेटे कर्म के अंक, जाहि गुरु ज्ञान भै।
तजो पखँड अभिमान, तो दुरमति दूरि कै[1] ॥६॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहीँ।
कहैं कबीर धर्मदास, अमर पद पावहीँ ॥७॥

॥ शब्द ४ ॥

चलो सोहंगम नारि, प्रीत पिय से करी।
झूठा है संसार, तो तामस परिहरी ॥१॥
दिना चारि को रंग, संग नहिँ जाइया।
यह तो रंग पतंग, नहीँ ठहराइया ॥२॥
पाँच चोर बड़ जोर, कुसँगि एते घने।
इन ठगियन के संग, मुसै घर निसु दिने ॥३॥
जग सोवत दिन रैन, मुसै घर आइ कै।
आपु भये कोतवाल, भली बिधि लूटिये ॥४॥

(१) किया।

इन ठगियन को पकरि, जो कोई लीजिये।
जोर करैं तब हाथ, छोड़ि नहिं दीजिये ॥५॥
चार कोस लै गाँव, ठाँव एकौ नहीं।
द्वादस नगर मँझार, जो पुरुष बिराजहीं ॥६॥
सोभा अगम अपार, पुरुष को ध्याइये।
द्वादस नगर मँझार, दरस सुख पाइये ॥७॥
कहैं कबीर धर्मदास, सोई पिय चीन्हिये।
सुरति निरति लै, गैल बहुरि नहिं फेरिये ॥८॥

॥ शब्द ५ ॥

यह जिव रहत भुलाइ, घने दिन चार को।
बाँह पकरि सतगुरु की, चलो भव पार को ॥१॥
तेजि[1] कुमति बेकार, सुमति गहि लीजिये।
सतगुरु सरन सम्हार, चरन चित दीजिये ॥२॥
गहि सतगुरु के चरन, चलो भव पार को।
बहुरि न मिलना होय, पीर हरो जीव को ॥३॥
चलहु आपने देस, पुरुष बल जोर लइ।
लाँघो अवघट घाट, कँवल छबि छाजई ॥४॥
गगन गुफा के घाट, निरंजन भेंटिये।
चीन्हो कलसा जाइ, अगम तहँ गम किये ॥५॥
निरंकार निज रूप, सो हिरदे देखिये।
अगम महल में जाइ, पिया जहँ भेंटिये ॥६॥
पुहुप दीप के मद्ध, पुरुष का नूर है।
कहै कबीर धर्मदास, सोई भरपूर है ॥७॥

(१) तजि कर।

॥ शब्द ६ ॥

चलो हंसा सतलोक हमारे, छाँड़ो यह संसारा हो।
यह संसार काल जम फंदा, कर्म का जाल पसारा हो ॥१॥
चौदह लोक बसत वा के मुख में, सब को करत अहारा हो।
जारि भूँजि कोइला करि डारै, फिर फिरि दै औतारा हो ॥२॥
ब्रह्मा विष्नु सिव दैंह धरि आये, उन कै कौन बिचारा हो।
सुर नर मुनि सब छल बल मारे, लै चौरासी डारा हो ॥३॥
मद्ध अकास आपु जहँ बैठे, सेत सरूप अकारा हो।
उन के रूप कहाँ लगि बरनौं, संख भान उँजियारा हो ॥४॥
नौ मुकाम दसएँ अस्थाना, जहाँ बसै पुरुष पुराना हो।
कोटि चाँद सूरज छिपि जैहैं, एक रोम परगासा हो ॥५॥
सेत सरूप सब्द जहँ फूले, हंसा करत बिहारा हो।
जो जो सरनि गहे सतगुरु के, उन के होत उबारा हो ॥६॥
वोहि देसवा एक अजर बस्तु है, बरसत अमृत धारा हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, लखो पुरुष दरबारा हो ॥७॥

॥ शब्द ७ ॥

सतगुरु सरन में आइ, तो तामस त्यागिये।
ऊँच नीच कहि जाय, तो उठि नहिं लागिये ॥१॥
उठि बोलै रारै रार, सो जानो घींच[1] है।
जेहि घट उपजै क्रोध, अधम अरु नीच है ॥२॥
माला वा के हाथ, कतरनी काँख में।
सूझै नाहीं आगि, दबी है राख में ॥३॥
अमृत वा के पास, रुचै नहिं राँड़ को।
स्वान को यही सुभाव, गहै निज हाड़ को ॥४॥

(१) टैंटी, झगड़ा बढ़ाने वाला।

का भे बात बनाये, परचे नहिँ पीव सोँ।
अंतर का बद्फैल, फैल गे जीव सोँ ॥५॥
कहैँ कबीर पुकारि, सुनो धर्म आगरा।
बहुत हंस लै साथ, उतरो भव सागरा ॥६॥

॥ शब्द ८ ॥

पढ़ सुगना सत नाम, बैठ तन ताख मेँ।
चार दिना का रंग, मिलै तन खाक मेँ ॥१॥
लावहु तेल फुलेल, काया है चाम की।
गर्द गर्द मिलि जाय, दोहाई सत नाम की ॥२॥
नीब न मीठी होय, सींचे गुड़ घीव से।
जा कर जौन सुभाव, छुटै नहिँ जीव से ॥३॥
जहँ सौदागर होय, तहाँ कछु भाखिये।
बिन गाहक बिन मोल, बस्तु ना खोलिये ॥४॥
चौमुख दीपक बारि, महल बिच सोइये।
नौ नारी से नेह, भक्ति बिन रोइये ॥५॥
चेतहु संत सुजान, तो जम से राड़ि है।
काल के हाथ गुलेल, तड़ाका मारिहै ॥६॥
धरती है मस्तूल, तंबु असमान है।
नौ लख जरत मसाल, सीढ़ी बंकनाल है ॥७
आगम कहैँ कबीर, सुनो धर्म आगरा।
बहुत हंस लेइ साथ, उतरो भव सागरा ॥८

॥ शब्द ९ ॥

चढ़ि अमवा की डारि, अकेली धन का रे खड़ी।
चले जाव मुरुख गँवार, मोरी तोहि का रे पड़ी।

की तोरी सासू दारुनिया, की नैहर दूर बसै।
की तोरे पिय परदेस, जोहत वा की बाट खड़ी ॥२॥
ना मोरी सासू दारुनिया, न नैहर दूर बसै।
हमरे बलम परदेस, जोहत वा की बाट खड़ी ॥३॥
पचरँग पहिरु चुनरिया, ऊपर धरो आरसी।
सतगुरु संग सुजान, समुझै मोर पारसी ॥४॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहीँ।
कहैं कबीर धर्मदास, प्रेम पद पावहीँ ॥५॥

॥ शब्द १० ॥

चढ़ि नौरँगिया की डार, कोइलिया बोलै हो।
अगम महल चढ़ि चलो, जहाँ पिय से मिलो ॥१॥
मिलि चलो आपन देस, जहाँ छबि छाजई।
ेत सब्द जहँ खिले, हंस होइ आवही ॥२॥
ग्र वस्तु मिलि जाय, सब्द टकसार हो।
हुँ दिस लागी झलरिया, तो लोक असंख हो ॥३॥
बु दीप एक देस, पुरुष जहँ रहहि हो।
हैं कबीर धर्मदास, बिछुरन नहिँ होइ हो ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

ाहेब पतिया पठाये, सो हंसा बाँचे हो।
ाती बाँचि घर जावो, पुरुष के पासे हो ॥१॥
ान रंग पालान, सुरति की काठी हो।
ानहद सब्द सवार, अनँत कला सोभा हो ॥२॥
ामिनि करहि सिंगार, हंसा सुनु बानी हो।
ावो पलँग चढ़ि बैठो, तो दरसन देहु हो ॥३॥

हंसा सब्द बिदेह, रूप नहिँ रेखा हो।
कामिनि रहत लजाय, सोभा निज्ञु देखा हो ॥४॥
धर्मराय उठि बोले, हंसा सुनि लेहु हो।
कहँ को कियो है पयान, सो कहो समुझाइ हो ॥५॥
तब हंसा अस बोले, सुनो धर्मराय हो।
पाये पुरुष के पान, तौ लोक के जाइब हो ॥६॥
तब धर्मराय पुनि बोले, हंसा सुनि लेहु हो।
जाहु पुरुष के पास, सीस पगु देहु हो ॥७॥
मानसरोवर ताल, जहाँ अमी सागर हो।
हंसा करै बिसराम, तो अग्र उजागर हो ॥८॥
अमर लोक एक दीप, तो सोभा सुहेल हो।
तहँ हंसन के बास, सुरति मिलि खेलै हो ॥९॥
अनहद धाम अचिंत, पुरुष जहँ छाजे हो।
अमर लोक निज धाम, हंसन कै देसा हो ॥१०॥
कहैं कबीर पुकारि, सुनो धर्मदासा हो।
वह तो अगम अगाध, पहुँचे कोइ हंसा हो ॥११॥

॥ शब्द १२ ॥

सूतल रहलौं मैं सखियाँ, तो बिष कर आगर हो।
सतगुरु दिहलैं जगाइ, पायौं सुख सागर हो ॥१॥
जब रहली जननी के ओदर[1], परन सम्हारल हो।
जब लौं तन में प्रान, न तोहि बिसराइब हो ॥२॥
एक बुंद से साहेब, मँदिल बनावल हो।
बिना नेंव कै मंदिल, बहु कल लागल हो ॥३॥

(१) मा के पेट यानी गर्भ में।

इहवाँ गाँव न ठाँव, नहीँ पुर पाटन हो ।
नाहिन बाट बटोही, नहीँ हित आपन हो ॥४॥
सेमर है संसार, सुवा उधराइल हो ।
सुंदर भक्ति अनूप, चले पछिताइल हो ॥५॥
नदी बहै अगम अपार, पार कस पाइब हो ।
सतगुरु बैठे मुख मोरि, काहि गोहराइब हो ॥६॥
सत्तनाम गुन गाइब, सत ना डोलाइब हो ।
कहैँ कबीर धर्मदास, अमर घर पाइब हो ॥७॥

॥ शब्द १३ ॥

धनुष बान लिये ठाढ़, जोगिनि एक माया हो ।
छिनहिं में करत बिगार, तनिक नहिं दाया हो ॥१॥
झिर झिर बहै बयार, प्रेम रस डोलै हो ।
चढ़ि नौरँगिया की डार, कोइलिया बोलै हो ॥२॥
पिया पिया करत पुकार, पिया नहिँ आया हो ।
पिय बिनु सून मँदिलवा, बोलन लागे कागा हो ॥३॥
कागा हो तुम का रे, किया बटपारा[1] हो ।
पिया मिलने की आस, बहुरि ना छूटहि हो ॥४॥
कहैँ कबीर धर्मदास, गुरू सँग चेला हो ।
हिलि मिलि करो सतसंग, उतरि चलो पारा हो ॥५॥

॥ शब्द १४ ॥

सखि अनहद धाम निवास, सो देखो ये घड़ी ।
तहँ पहुँचै कोइ दास, सो देखो० ॥ १ ॥
सुख कोइ एक सर हंस, सो देखो० ।
परखि गहो निज नाम, सो देखो० ॥ २ ॥

---

(१) बारह बाट यानी बेठिकाने या इधर उधर ।

जन्म जन्म दुख मिटे, सो देखो० ।
लइ राखो निज धाम, सो देखो० ॥ ३ ॥
अछय बृछ के डहर समाय, सो देखो० ।
सत्त नाम परताप, सो देखो० ॥ ४ ॥
हंसा निज घर चले, सो देखो० ।
काल रहा मुरझाय, सो देखो० ॥ ५ ॥
अधर दुलीचा अमर पद, सो देखो० ।
सतगुरु दिया बिछाय, सो देखो० ॥ ६ ॥
धर्मनि मिले कबीर, सो देखो० ।
हिलि मिलि करहि कलोल, सो देखो० ॥ ७ ॥

॥ शब्द १५ ॥

गुन कर बौरी, जब लौं नैहर माहिँ हो ।
फिरि जैहो ससुरारि, पिया के पास हो ॥ १ ॥
जब लगि राज पिया कर, तू सुख करि ले हो ।
सासु ननदिया दारुन, उत्तर जनि देहु हो ॥ २ ॥
सतगुरु डोलिया फँदावल, लगे चार कहार हो ।
आगे चले मोर साहेब, पाछे चालनहार हो ॥ ३ ॥
जाइ उतारे वोहि देसवाँ, जहँ दिस न दुवार हो ।
मोतियन चुनि घर बने, हीरा लगे किवार हो ॥ ४ ॥
चंद्र लगन मोर अँचरा, सुरज लगन मोर दँह हो ।
हृदे लगन मोरा साहेब, जहँ लगि फैले दृष्टि हो ॥ ५ ॥
मन मन बिहसै दुलहिनि, अमर वर पाये हो ।
साहेब कबीर कै दिहल, सुनि ले धर्मदास हो ॥ ६ ॥

॥ शब्द १६ ॥

मेहीं मेहीं बुकवा पिसावो, तो पिय के लगावो हो।
सुरति सोहंगम नारि, तो दुरमति छाँड़ो हो ॥ १ ॥
घटहि में मानसरोवर, घाट बँधावो हो।
घटहि में पाँच कहार, दूलह नहवावहिँ हो ॥ २ ॥
घटहि में नेह नउनिया, तो चरन पखारहिँ हो।
प्रेम प्रीत के ललना, तो पलना झुलावहिँ हो ॥ ३ ॥
घटहि में दया के दरजी, तो दरज मिलावहिँ हो।
पाँच तत्त के जामा, दुलह पहिरावहिँ हो ॥ ४ ॥
घटहि में लोह लोहार, तो कँगना डावहिँ[1] हो।
तीन गुनन के सेहरा, दुलह पहिरावहिँ हो ॥ ५ ॥
घटहि में चंदन चौक, तो चौक पुरावहिँ हो।
सत्त सुकृत को कलसा, तहाँ धरावहिँ हो ॥ ६ ॥
घटहि में मन सत माली, तो मौर ले आवहि हो।
घटहि में जुगति के जौहरि, जोत पहिरावहि हो ॥ ७ ॥
घटहि सोहंगम नारि, तो पिय को रिझावहि हो।
बार बार गुरु झगरि, तो अरज सुनावहि हो ॥ ८ ॥
यह मंगल सतलोक, हंस जन गावहि हो।
कहैं कबीर धर्मदास, बहुरि नहिं आवहि हो ॥ ९ ॥

॥ शब्द १७ ॥

सतगुरु सगुन धरावो मोरे बाबा,
हम भईं ब्याहन जोग हो।
तन मन सबै प्रेम रस माते,
हँसै नैहर के लोग हो ॥ १ ॥

---

(१) डाहना=धात को गला कर गढ़ना।

बाम्हन बेगि पठावो मोरे बाबा,
देखि आवै वोहि देस हो।
रवि ससि तारा दिवस न रजनी,
बसै अलख अलबेल हो ॥ २ ॥
कर पग पीठ पेट नहिँ काया,
हम से कहा न जात हो।
अस बर लिखा लिलार हमारे,
बाम्हन कहु तहँ जाइ हो ॥ ३ ॥
बंध झलरिया बेँदी झलकै,
चंद सुरज के पार हो।
मानिक दियना तहवाँ झलकै,
जगमग जोति अपार हो ॥ ४ ॥
बिना सुरत संसारहि निरखै,
बिन मुख बोलनहार हो।
स्रवन नैन बिनु सुनै औ देखै,
आसन अधर अधार हो ॥ ५ ॥
प्रेम प्रीत से खंभ गड़ावो,
गैबी अलँब[1] बिछावो हो।
कनक कलस धरि मंगल गावो,
मोतियन झालरि लाव हो ॥ ६ ॥
दुलहिनि दुलहा ब्याहन आये,
भये दोऊ एक ठौर हो।
भया बियाह उछाह परम पद,
भये उर सत्त उचार हो ॥ ७ ॥

---

(१) सहारा, भरोसा।

पाये सोहाग माँग भर सेँदुर,
नखसिख सोरहों सिँगार हो।
फूल जड़ित रतनन से राजित[1],
बेँदी झलके लिलार हो॥ ८॥
सुखमनि पलँग बिछावो सखियाँ,
पदुमन धुनि झनकार हो।
अब का सोवो उठि जागो धनियाँ,
आखिर करो सम्हार हो॥ ९॥
बिनति करूँ मैं चरन कँवल में,
सुनो मोरे प्रान-नाथ हो।
धरमदास के सतगुरु समरथ,
तोहरे हाथ निबाह हो॥ १०॥

॥ शब्द १८ ॥

हमरा बियाह करो मोरे बाबा,
तुम सोँ नाहिँ निबाह हो।
जिन के नाहिँ रूप औ रेखा,
उन से हमरो बियाह हो॥ १॥
आवे न जाय मरै ना जीये,
सो बर खोजो जाई हो।
बूढ़ न बार तरुन नहिँ चेलिक[2],
वा को तिलक लगाई हो॥ २॥
गगन मँदिल वह गढ़ मोरे बाबा,
अरध उरध के बीच हो।
पवन बराती ब्याहन आये,
मान करो सनमान हो॥ ३॥

(१) शोभित। (२) नौजवान।

तिरबेनी से नीर मँगावो,
अछय बृच्छ कै डार हो।
सत्त सुकृत के कलस धरावो,
पूजो पाँव हमार हो ॥ ४ ॥
तिरगुन सेँ दुरा मँगावो मोरे बाबा,
पिय से माँग भराइ हो।
सतगुरु बिप्र के चरन पखारो,
जुग जुग रहै सोहाग हो ॥ ५ ॥
सब्द सुरत से गाँठ जुरावो,
माँड़ो राखो छाइ हो।
पाँच भँवरिया घुमाओ मोरे बाबा,
गँठिया देवो निबुकाइ हो ॥ ६ ॥
चाँद सुरज दोउ कोहबर बाबा,
पाँजी[1] दसो दुवार हो।
ऊँच दुवारी निहारो सखियाँ,
निहुरि कै घर को जाहु हो ॥ ७ ॥
ज्ञान के डोलिया फँदावो मोरे बाबा,
करि देवो बिदा हमार हो।
धरमदास से छुटल भव सागर,
सब सोँ भेँटि अकवार हो ॥ ८ ॥

॥ शब्द १९ ॥

चलो सखि देखन चलिये, दुलह कबीर हैँ।
उन सोँ जुरल सनेह, जठर सोँ राखिहैँ ॥ टेक ॥

---

(१) रास्ता।

पाँच तत्त को बासा, त्यागो बेगि कै।
छाँड़ो झिलि मिलि नेह, पुरुष गम राखि कै ॥ १ ॥
लाँघो औघट घाट, पंथ निज ताकि कै।
गहो सुकृत निज डोर, अगम गम राखि कै ॥ २ ॥
चार कोस आकास, तहाँ चढ़ि देखिये।
आगे मारग झीनि, तो सुरत बिबेकिये ॥ ३ ॥
मुकुट एक अनूप, छत्र सिर साजिहै।
ढुरत अग्र को चौंर, सब्द धुनि गाजिहै ॥ ४ ॥
सेत धुजा फहराय, भँवर तहँ गूँजहीं।
नितहिं उठै झनकार, गगन घनघोरहीं ॥ ५ ॥
कहैं कबीर धर्मदास सोँ, मूल उचारिये।
आगम गम्य बताइ कै, हंस उबारिये ॥ ६ ॥

॥ शब्द २० ॥

[प्रश्नोत्तर]

सत्त सुकृत सतनाम, सो आदि मनाइये।
लीजे साहेब को नाम, प्रेम पद पाइये ॥ १ ॥
सुरति नहीं बिलगाइ, तो मुक्ती होइ हो।
चलो हंसा वहि देस, बसै जहँ पीव हो ॥ २ ॥
चाँद सुरज के पूरब[1], हंसा पच्छिम हो।
वोहि देसवाँ मत जाव, बसै जहँ पंछी[2] हो ॥ ३ ॥
चाँद सुरज के दक्खिन, हंसा उत्तर हो।
खोलो मुक्ति दुवार, उतरि चलो पार हो ॥ ४ ॥
तीन सै साठ कड़िहार[3], काल जम जार हो।
उन के वार जनि भूलो, भवसागर धार हो ॥ ५ ॥

(१) ऊपर। (२) शरीर-बद्ध जीव। (३) मल्लाह।

बिहसैं सब सखियाँ, तो रानी[1] मनाइहै ।
रानी देहु बकसीस, हंसा गहि आनौं हो ॥ ६ ॥
[रानी]–जो तुम सखियाँ सयानी, हंसा गहि आनो हो ।
सात दीप नौ खंड की, रानी कहावों हो ॥ ७ ॥
[सखी]–हो हंसा तुम ठाढ़, कहाँ को जाइब हो ।
सात दीप नौ खंड की, रानी छाँड़ि हो ॥ ८ ॥
[हंस]–सात दीप नौ खंड बसे, बकबादिन हो ।
ठाकुर[2] मति के हीन, कर्म बस बाँधा हो ॥ ९ ॥
स्याम रंग पहिराव, कुसुम रँग सारी हो ।
मानो मेघ घन गरजि, उमँगि दल बादल हो ॥१०॥
चलि जाहु नारि गँवारि, तुँ जगत पियारी हो ।
चित्रगुप्त दुर्ग[3] दानी की, रहो दुलारी हो ॥११॥
[सखी]–हो हंसा तुम ठाढ़, कहाँ के जाइब हो ।
सन्मुख होइ कै देखो, तो करहुँ जवाब हो ॥१२॥
स्याम रंग पहिराव, कुसुम रँग चुनरी हो ।
कठिन कला छबि झलकै, तो काल दुलारी हो ॥१३॥
मैं तोहि पूछौं हंसा, कहाँ तोरे बाप हो ।
हम से कहो समझाय, कहा करे पाप हो ॥१४॥
[हंस]–सत साहेब जो पिता, तो सतगुरु माता हो ।
चित्रगुप्त दुर्गदानी, सो येहि बिधि जाता हो ॥१५॥
सब सखि माथ नवायो, तो हंसा चलि भे हो ।
आगे मिले धर्मराय, काल सिर नाये हो ॥१६॥

---

(१) रानी से मतलब माया और सखियों से माया की शक्तियाँ।
(२) काल। (३) दुर्ग=कठिन। दुर्ग-दानी नाम काल का है।

अचिंत पुरुष को मंगल, हंसा गावै हो।
कहैं कबीर धर्मदास, अमर पद पावै हो ॥१७॥

॥ बधावा ॥

॥ शब्द १ ॥

पधारो साहेब पाहुना, मोरे मन में बहुत अनंद ॥ टेक ॥
सखि का से पोताओं आँगना, का से पोताओं चौक ॥ १ ॥
चँदन पोताओं आँगना, गजमोतियन पुराओं चौक ॥ २ ॥
सखि आँगन बोओं लायची, मोरे फलसी नागर बेल।
पधारो साहेब पाहुना ॥ ३ ॥
ऊँची चढ़ कर जोवती, साहेब का रथ केती दूर ॥ ४ ॥
ऊँची लहर समुद्र की, लल बहै जमुना का नीर ॥ ५ ॥
भक्ति भई साहेब आइया, बाजत अनहद घोर ॥ ६ ॥
कनक सिंहासन बैठका, ओढ़न अंबर चीर ॥ ७ ॥
सखि भवसागर हेरिया, लह्यो सुख सागर तीर ॥ ८ ॥
धरमदास की बीनती, मोहिं मिलियो साहेब कबीर ॥ ९ ॥

॥ शब्द २ ॥

बधावा संत सजाऊँ हो।
जा बिधि सतगुरु मेहर करैं, सोई बिधि लाऊँ हो ॥ टेक ॥
रतन पटोरा[1] डारि पाँवड़ा[2], सन्मुख जाऊँ हो।
सब सखियाँ मिलि बाँटल बधाई, मंगल गाऊँ हो ॥ १ ॥
घसि घसि चंदन अँगना लिपाऊँ, चौक पुराऊँ हो।
मेवा नरियर पान मिठाई, संजम सबै मँगाऊँ हो ॥ २ ॥

---

(१) कपड़ा। (२) क़ालीन या बढ़िया कपड़ा जो बड़े आदमियों के चलने के लिये बिछाया जाता है।

ीर खाँड़ घृत अमृत भोजन, संत जिमाऊँ हो।
रन धोइ चरनामृत लेऊँ, सीस नवाऊँ हो ॥ ३ ॥
ब मोरे साहेब तखत बिराजैं, आरति लाऊँ हो।
न पर्वान दया से पाऊँ, सब मिलि गाऊँ हो ॥ ४ ॥
ब मोरे सतगुरु पलँग पधारैं, चरन दबाऊँ हो।
रमदास याही बिधि करि, सतलोक सिधाऊँ हो ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३ ॥

ाहेब सतगुर घर आया हो।
ँगना मोर जगमग भया, सुख सम्पति लाया हो ॥ १ ॥
आधि[1] गई मेरी हे सखी, आज सज्जन पाया हो।
धन्य बिधाता लेख लिखा, निज भाग जगाया हो ॥ २ ॥
कोमल बचन अँग दया घनेरी, कल्प बृच्छ की छाया हो।
धन जननी अस संत जिन जाया, अनँद बधाया हो ॥ ३ ॥
जप तप नेम धर्म बहु कीन्हा, रसना नामहिँ गाया हो।
धरमदास सतगुरु सतसँग से, छिन में परम पद पाया हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ४ ॥

सतगुरु आये द्वार, मन में बजत बधाइया।
सतगुरु साहेब दीन-दयाला, द्वारे मोरे आइया।
जुगन जुगन के करम मिटत भे, सतगुरु दरस दिखाइया ॥ १ ॥
प्रेम सुरत की करी रसोई, व्यंजन[2] आसन लाइया।
जेँवन बैठे सतगुरु साहेब, अधर से चौँर डोलाइया ॥ २ ॥
दया भाव के पलँग बिछाये, प्रेम दुलीचा लाइया।
ता पर सोये सतगुरु साहेब, सुरति के तेल लगाइया ॥ ३ ॥

---

(१) मानसी दुक्ख; चिन्ता। (२) भोजन।

धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनिये समरथ साँइया ।
साहेब कबीर प्रभु मिले बिदेही, झीना दरस दिखाइया ॥ ४ ॥

॥ शब्द ५ ॥

आज आनंद भये मेरे घर, निरगुन संत पधारे हो ॥ टेक ॥
घसि घसि चंदन अँगना लीपाओ, गजमोतियन चौक पुराओ हो ॥ १ ॥
कनक रतन का कलस मँगाओ, हीरा जड़ाव की झारी हो ॥ २ ॥
सतगुरु तो सिंहासन बैठे, सब्द का चँवर ढुराओ हो ॥ ३ ॥
धरमदास की अरज गोसाँई, मंगलचार नित गाओ हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ६ ॥

मोरे आये संत सनेही, धन धन घड़ी आज की हो ॥ टेक ॥
अतर फुलेल न्हवावोँ सजनी, केसरि तिलक लगाओँ हो ॥ १ ॥
धूप दीप नैबेद आरती, फूल माल पहिराओँ हो ॥ २ ॥
जिनके दरस होय सब काजा, तरसै राना राजा हो ॥ ३ ॥
सत्त सब्द जहँ होय प्रकासा, अस कबीर धर्मदासा हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

आज घर आये साहेब मोर ॥ टेक ॥
हुलसि हुलसि धन अँगना बुहारे, मोतियन चौक पुराई ॥ १ ॥
चरन धोय चरनामृत लीन्हा, सिंहासन बैठाई ॥ २ ॥
पाँच सखी मिलि मंगल गावैँ, सब्द में सुरति समाई ॥ ३ ॥
बाँधोगढ़ के आमिन[1] बिनवै, धनि हो कबीर गोसाँई ॥ ४ ॥

---

(१) धर्मदासजी की स्त्री का नाम ।

॥ बारहमासा ॥

धर सत्य पुरुष का ध्यान, तुम्हारो पूरन है आसा ॥ टेक
पिरथम मास असाढ़ जो लागे, सोधो काया को।
बाहर दृष्ट कहाँ सों आया, भीतर छाया को॥
पंच का नगर बसाया को।
नख सिख से रचि नैन नासिका, इसे बनाया को॥
उसी का खोज करो बासा॥ १ ॥
सावन सार नाम निज जपि ले, यह जप अपने से।
कर नहिँ हले न डोले जिभ्या, सोहं जपने से॥
काल नहिँ व्यापै सुषमनि से।
इँगल पिँगल के मारग की, तुम डोर गहो मन से।
नाम सोहंग जपो स्वाँसा॥ २ ॥
भादोँ भर्म मेटि सतगुरु की सेवा कछु करना।
गगन गुफा के मारग को, तुम धीरज से चढ़ना॥
केवाड़े द्वादस हैं लागे।
बैकुंठ पुरी में दसम द्वार है, तहाँ जोति जागे॥
वहाँ नहिँ लगे काल फाँसा॥ ३ ॥
क्वार सुमति बृजराज, कोई जन अंतर ध्यान धरै।
नाभि कँवल में सुरति लगावै, आतम नजर परै॥
झलक्कै दसम दुवारे मेँ।
अगम अगोचर पुर्ष अबिनासी, सुन्न अटारी मेँ॥
वहाँ नहिँ लगे भूख प्यासा॥ ४ ॥
कातिक षष्ट कँवल दल भीतर, अगम जोति दरसै।
चमकै बिजुली मेघ जो गरजै, अमृत जल बरसै॥

बिना दल बादल झनकारा ।
उलटि पवन के नीचे होई, बहै अमृत धारा ॥
वहाँ नहिं लागै भौ फाँसा ॥ ५ ॥
अगहन आसा लगी हमारी, गगन गुफा माहीं ।
बज्र केवारे लगे द्वार में, सहज खुलैं नाहीं ॥
जहाँ कछु हिकमत का काजा ।
उलटि पवन कै ठोकर मारो, खोलो दरवाजा ॥
तिन्हाँ का छूटै जम त्रासा ॥ ६ ॥
पूस मास में पिया आपना, खोज करो भाई ।
जनम जनम के संसय तुम्हरे, सबै छूटि जाई ॥
लखो घट बीच पिया छाया ।
सतगुरु पूरे किरपा करिके, हमको बतलाया ॥
किया मोरे बैरियन को नासा ॥ ७ ॥
लागत माघ अगम की बानी, सुनो संत प्यारे ।
भर्म जाल भौसागर से तुम, रहो सदा न्यारे ॥
गगन में अनहद बाजत है ।
सुन्न महल के भीतर में, सिव सक्ति बिराजत है ॥
बने वहँ खूबहि कैलासा ॥ ८ ॥
फागुन फाँस लगै नहिं जम की, गहो नाम डोरी ।
पाँच चोर बसे काया माहीं, करत सदा चोरी ॥
कोई की हाँक नहीं मानैं ।
नर नारी औ देवी देवा, सब को भरमाने ॥
काया में साँच करो बासा ॥ ९ ॥
चैत चित्त के मारग को, तुम खोजो दिन राती ।
सुन्न महल में दीपक बारो, बिना तेल बाती ॥

दरस कोइ साधू जन पावै ।
षट चक्कर कै खोल केवारा, ऊपर चढ़ि जावै ॥
तहाँ है जगर मगर हंसा ॥ १० ॥
बैसाख बात कोइ मोरी मानि ले, सब से छोट रहना ।
भला बुरा मत कहो केहू को, भला बुरा सहना ॥
भला तुम छाँड़ि बड़ाई को ।
तामस खीस मत करो जगत में, यह भाव संतन को ॥
बनो तुम दासन के दासा ॥ ११ ॥
जेठ जागती जोति की महिमा, परखो संत सुजान ।
अजपा जाप जपो सोहंगम, पावो पद निरबान ॥
सब्द धुन पाँचो लौ लावो ।
गुरु कबीर किरपा तें धर्मन, गुन बारह मास गावो ॥
जिन्हों का ज्ञान नगर बासा ॥ १२ ॥

॥ बसंत और होली ॥

॥ बसंत ॥

प्यारे कंत से मिलि खेलो बिमल बसंत ।
खोलो अँधेरी कोठरी, मन बैठो महल एकंत ॥ टेक ॥
गगन मँदिल दीपक धरो हो, भवन करो उँजियार ।
छैल छबीले कब मिलिहैं, मोर जीवन प्रान अधार ॥ १ ॥
गंगा जमुना सरसुती हो, चंद सूर के बीच ।
अर्ध ऊर्ध के मध्य में हो, अमी अरगजा कीच ॥ २ ॥
बिन पग नटवा निरत करत हैं, बिन कर बाजे ताल ।
बिना नयन छबि देखनी हो, बिन सरवन झनकार ॥ ३ ॥

सहस सुरंगी रमि रहा हो, हिलि मिलि एकै ठाँव।
धर्मनि भेंटे भाव से हो, साहेब कबीर के पाँव ॥ ४ ॥

॥ होली १ ॥

हमरी उमिरिया होरी खेलन की,
पिय मोसों मिलि के बिछुरि गयो हो ॥ १ ॥
पिय हमरे हम पिय की पियारी,
पिय बिच अंतर परि गयो हो ॥ २ ॥
पिया मिलैं तब जियौं मोरी सजनी,
पिया बिन जियरा निकरि गयो हो ॥ ३ ॥
इत गोकुल उत मथुरा नगरी,
बीच डगर पिय मिलि गयो हो ॥ ४ ॥
धरमदास बिरहिनि पिय पावै,
चरन कँवल चित गहि रहो हो ॥ ५ ॥

॥ होली २ ॥

होरी खेलो सयानी, फागुन की ऋतु आनी ॥ टेक ॥
मनुषा जनम बहुरि ना पैहो, साखो बेद पुरानी।
फिर पाछे पछिताहुगी सजनी, परिहो चौरासी खानी।
फिरो जुग जुग भटकानी ॥ १ ॥
सील सँतोष के केसर घोरी, छिरकत पिय रुचि मानी।
आतम नारि करत न्योछावर, तन मन धनहिँ लुटानी।
जब पिया के मन मानी ॥ २ ॥
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, अनहद घोर निसानी।
पाँच पचीस लिये सँग अबला, गगन में धूम मचानी।
उठै सुर बारहबानी ॥ ३ ॥

गगन गली में छैके अबिनासी, मगन भई मुसुकानी ।
भक्ति दान मोहिँ फगुआ दीजै, अमर लोक सहदानी ।
मिटै जब आवा जानी ॥४॥
जग के भरम छोड़ दे बौरी, लोक लाज बिसरानी ।
साहेब कबीर मिले मोहिँ सतगुरु, धरमदास भल जानी ।
भई निर्भय पटरानी ॥५॥

॥ होली ३ ॥

जग ये दोउ खेलत होरी ।
माया ब्रह्म बिलास करत हैं, एक से एक बरजोरी ॥ टेक ॥
सचिदानंद सरूप अखंडित, ब्यापक है सब ठौरी ।
हिये नैन से परख परी जेहि, जोति समाय रहो री ॥१॥
जोबन जोर नैन सर[1] मारत, ठहर सकै को कोरी[2] ।
मदन प्रचंड उठै चमकारी, काया करी चित चोरी ॥२॥
निरगुन रूप अमान अखंडित, जा में गुन बिसरो री ।
माया सक्ति अनंद किये है, सबहि में अगर भरो री ॥३॥
कारन सूछम स्थूल देंह धरि, भक्ति हेत तृन तोरी ।
धर्मनि बिना दरस गुरु मूरत, कस भव पार भयो री ॥४॥

॥ होली ४ ॥

तुम संतो खेलु सम्हारि, जग में होरी मचि रहि भारी ॥टेक॥
जड़ चेतन दुइ रूप बनाये, एक कनक दुजे नारी ।
पाँच पचीस लिये सँग अबला, हँसि हँसि मिलि गावैं गारी ॥१॥
दुरमति दम्भ[3] गहे कर में डफ, हबड़ हबड़ दै तारी ।
तिरगुन तार तँबूरा बाजै, आस तृसना गति न्यारी ॥२॥

---

(१) बान । (२) तिरछी चितवन । (३) कपट ।

चोवा चंदन अबिर अरगजा, माया की गह्वर भारी ।
षट दरसन पाखंड छानवे, पकरि किये बेगारी ॥ ३ ॥
लोभ मोह दुइ भरि पिचुकारी, छूटत बारम्बारी ।
जो कोइ सन्मुख होइ के खेलै, तिनहिं छींट लगै कारी ॥ ४ ॥
कुमति गुलाल डारि मुख मींजै, काम पुटरिया मारी ।
सुर नर मुनि अरु पीर औलिया, भींजि रहे संसारी ॥ ५ ॥
चतुरन फगुआ दे दे छूटे, मूरख को लगै प्यारी ।
कहैं कबीर सुनो हो धर्मनि, निर्गुन ज्ञान गलि[1] न्यारी ॥ ६ ॥

॥ सोहर ॥

॥ शब्द १ ॥

साहेब मोर बसत अगमपुर, जहाँ गम न हमार हो ॥टेक॥
साहेब के ऊँची अटरिया, तरे बिषम बजार हो ।
पाप पुन्न दोउ बनियाँ, हीरा लाल बिकाय हो ॥ १ ॥
आठ कुवा नव बावड़ी, सोरह पनिहार हो ।
भरलि गगरिया ढरकि गै, ठाढ़ी धन पछिताय हो ॥ २ ॥
छोट मोट डोलिया चँदन कै, लोटे चार कहार हो ।
लै कै उतारे वोहि देसवाँ, जहाँ दिस न दुवार हो ॥ ३ ॥
कहैं कबीर सुनु धर्मन, मेरो वोहि देस हो ।
जो रे गये सो बहुरे नहिं, कस कहत सनेस हो ॥ ४ ॥

॥ शब्द २ ॥

जाके दुवरवा जमिरिया सो कैसे सोइल हो ।
महर महर करै फूल, नींद नहिं आइल हो ॥ १ ॥

---

(१) गली ।

काटौ मैं पेड़ जमिरिया, तौ पलँगा बिनाइब हो ।
तेहि पर सोवै मोर साहेब, बेनिया डोलाइब हो ॥ २ ॥
सास मोर सुतल अगरिया[1] ननद गजओबर[2] हो ।
सैयाँ मोर सुतल धौरहरिया[3], मैं कैसे जगाइब हो ॥ ३ ॥
उठो मोरी लहुरी ननदिया, तुम ठाकुराइन हो ।
पाँच चोर घर मूसैं, तो दियना जगाइब हो ॥ ४ ॥
एहि नगरी बसै पिय मोर, तो कोइ न जगावल हो ।
नइहर के अभिमानी, पिया नहिँ चीन्हल हो ॥ ५ ॥
इहाँ कै नाच भवनवा, नीक नहिँ लागै हो ।
घटहि मैं एक छिदुनिया[4], नाच तहँ देखब हो ॥ ६ ॥
छोट मोट पेड़ जमिरिया, तो फुलवा लहर करै हो ।
तेहि तरे बाजन बाजै, तो सब्द सुनावल हो ॥ ७ ॥
साहेब कबीर कै सोहर, संत जन गावल हो ।
सुनहु हो धर्मदास, अमर पद पावल हो ॥ ८ ॥

॥ शब्द ३ ॥

कहँवाँ से जिव आइल, कहँवाँ समाइल हो ।
कहँवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो ॥ १ ॥
निरगुन से जिव आइल, सर्गुन समाइल हो ।
कायागढ़ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो ॥ २ ॥
एक बुंद से काया महल उठावल हो ।
बुंद परे गलि जाय, पाछे पछितावल हो ॥ ३ ॥
हंस कहै भाइ सरवर, हम उड़ि जाइब हो ।
मोर तोर एतन दिदार, बहुरि नहिँ पाइब हो ॥ ४ ॥

---

(१) बाहर । (२) भीतर । (३) ऊपर । (४) छेद अर्थात तीसरा तिल ।

इहवाँ कोइ नहिँ आपन, केहि सँग बोलै हो ।
बिच तरवर मैदान, अकेला (हंसा) डोलै हो ॥ ५ ॥
लख चौरासी भरमि, मनुख तन पाइल हो ।
मानुख जनम अमोल, अपन सोँ खोइल हो ॥ ६ ॥
साहेब कबीर सोहर गावल, गाइ सुनावल हो ।
सूनहु हो धर्मदास, एही चित चेतहु हो ॥ ७ ॥

॥ शब्द ४ ॥

खेलत रहलूँ अँगनवा, सखी सँग साथी हो ।
आइ गवन निगिचाय, बदन भयो धुमिल हो ॥ १ ॥
पहिले गवनवाँ ऐलूँ, पनियाँ के भेजलन हो ।
देखि कुवाँ कै रूप, मनै पछितैलूँ हो ॥ २ ॥
कुवाँ भीर भई भारी, तो गागर फूटल हो ।
कौन उत्तर घर देँव, हाथ दोउ छूछे हो ॥ ३ ॥
घर मोरी सासु दारुनी, तो ननद हठीली हो ।
केहि से कहब दुख आपन, संगी न साथी हो ॥ ४ ॥
ठाढ़ि मोहारे[1] धनि सुसुके, मनै पछिताइल हो ।
पिया मो से मुखहुँ न बोले, कवन गुन लागल हो ॥ ५ ॥
सजन की ऊँची अटरिया, तो चढ़त लजाऊँ हो ।
कल नहिँ लेत पहरुआ, कवन बिधि जाइब हो ॥ ६ ॥
गल गज मोती कै हार, तो दीपक हाथे हो ।
झमकि के चढ़लूँ अटरिया, पुरुष के पासे हो ॥ ७ ॥
कहैँ कबीर पुकारि, सुनो धर्म आगर हो ।
बहुत हंस लै साथ, उतरु भव सागर हो ॥ ८ ॥

---

(१) दरवाजे पर ।

॥ राग गारी १ ॥

देवो न देवो प्रभु जन अपने को,
समरथ के गुन गाओं किहाँजू ।
गगन मँदिल मोरे सजन बसत हैं,
उनहुँ को नेवत बोलाओं किहाँजू ॥ १ ॥
काम क्रोध मद लोभ पाँवड़े[1],
भीतर भवन बुलाओं किहाँजू ।
नयन के जल लै चरन पखारों,
चित चौका बैठारों किहाँजू ॥ २ ॥
करनी कै पातर कथनी कै दोना,
साखी के सींक लगाओं किहाँजू ।
भाव कै भात औ दाल दया कै,
सब्द कै बरा बनाओं किहाँजू ॥ ३ ॥
मनसा मंडे[2] सरस बनाओं,
प्रेम के घिरत चुवाओं किहाँजू ।
सत कै दूध करनी कै खोवा,
सक्कर सुमति मिलाओं किहाँजू ॥ ४ ॥
सुख पाय जेवैं सजन हमारे,
स्वाँस कै बायु डोलाओं किहाँजू ।
सीसा सार भरे जल अमृत,
सो अचवन करवाओं किहाँजू ॥ ५ ॥

---

(१) कालीन या फर्श जो बड़े लोगों के चलने को बिछाया जाता है। (२) रोटी।

पाँच पचीस पकरि नौ नारी,
सजन को गारी गवाओँ किहाँजू ।
तत्त तमोलिन सुघर सुमति ले,
सजन को बीरा खवाओँ किहाँजू ॥ ६ ॥
एकइस खंड महल के भीतर,
निर्भय पलँग बिछाओँ किहाँजू ।
धर्मदास कहे साहेब मोरे,
मुक्ति मनोरथ पाओँ किहाँजू ॥ ७ ॥

॥ राग गारी २ ॥

सतगुरु आये द्वार, सुरति रस बिंजना ।
काहे के बैठक देउँ, सुरति रस बिंजना ॥ १ ॥
चंदन पीढ़ी बैठक, सुरति रस बिंजना ।
नारी नर चरन पखारो, सुरति रस बिंजना ॥ २ ॥
भात रीँधो रस दूध, सुरति रस बिंजना ।
धोइ मूँग के दाल, सुरति रस बिंजना ॥ ३ ॥
काहे को थाल परोसौं, सुरति रस बिंजना ।
काहे कटोरी आन दूध, सुरति रस बिंजना ॥ ४ ॥
सोने के थार परोसो, सुरति रस बिंजना ।
रूपे कटोरी आन दूध, सुरति रस बिंजना ॥ ५ ॥
जेँइ लेहु सतगुर पाहुन, सुरति रस बिंजना ।
मुख भर देहु असीस, सुरति रस बिंजना ॥ ६ ॥
पाथर को का पूजे, सुरति रस बिंजना ।
मुख बोले ना खाय, सुरति रस बिंजना ॥ ७ ॥
साँचे पूजहु साध, सुरति रस बिंजना ।
मुख बोले औ खाय, सुरति रस बिंजना ॥ ८ ॥

आइ पिया सुख पाउ, सुरति रस बिंजना।
करि लेहु सब्द सिँगार, सुरति रस बिंजना ॥ ६ ॥
बिँजना बिँजना[1] सब कहै, सुरति रस बिंजना।
बिंजन लखे न कोइ, सुरति रस बिंजना ॥१०॥
कहैँ कबीर धर्मदास, सुरति रस बिंजना।
रहत अमर पुर छाय, सुरति रस बिंजना ॥११॥

मिश्रित का अंग

॥ शब्द १ ॥

गुरु बिन कौन हरै मोरी पीरा ॥ टेक ॥
रहत अलीन मलीन जुगन जुग, राई बिनत पाये एक हीरा १
पाये हीरा रहै नहिँ धीरा, लेइ के चले वोहि पारख तीरा २
सो हीरा साधू सब परखे, तब से भयो मन धीरा ३
धरमदास बिनवै कर जोरी, अजर अमर गुरु पाये कबीरा ४

॥ शब्द २ ॥

आये दीन-दयाल दया कीन्हा ॥ टेक ॥
दीन जानि गुरु समरथ आये, बिमल रूप दरसन दीन्हा १
चरन धोइ चरनामृत लीन्हा, सिंहासन बैठक दीन्हा २
करूँ आरती प्रेम निछावर, तन मन धन अरपन कीन्हा ३
धरमदास पर दाया कीन्हा, सार सब्द सुमिरन दीन्हा ४

॥ शब्द ३ ॥

बरनौं मैं साहेब तुम्हरे चरना ॥ टेक ॥
संतन सुख-दायक लायक प्रभु दुख हरना ॥ १ ॥

---

(१) बिजन बिजन।

सतजुग नाम अचिंत कहाये, खोड़स हंस को दई सरना ॥२॥
त्रेता नाम मुनेन्द्र कहाये, मधुकर बिप्र को दई सरना ॥३॥
द्वापर करुनामय कहलाये, इंद्र मती के दुख हरना ॥४॥
कलजुग नाम कबीर कहाये, धर्मदास अस्तुति बरना ॥५॥

॥ शब्द ४ ॥

ज्ञान की चुनरी धुमल भइ सजनी, मन की न पुरइल आसा हो।
बारहि बार जीव मोर लरजै, कैसे कटै दिन राता हो ॥१॥
सास दुख सहलौं ननद दुख सहलौं, पिय दुख सहल न जाई हो।
जागो हो मोरि सासु गोसाँई, पिय मोर चलल बिदेसवाँ हो ॥२॥
पइयाँ परि परि ननदि जगावै, कहे न पावै सनेसवा हो।
मोर मुख ताको मत जा बिदेसवाँ, हौं मैं चेरि तुम्हार हो ॥३॥
बहियाँ पकरि स्वामी सेजिया बिठावै, जनि रोवो धनियाँ[१] हमार हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, जुगन जुगन अहिवात[२] हो ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

सत नामै जपु जग लड़ने दे ॥ टेक ॥
यह संसार काँट की बारी, अरुझि सरुझि के मरने दे ॥१॥
हाथी चाल चलै मोर साहेब, कुतिया भुँकै तो भुँकने दे ॥२॥
यह संसार भादों की नदिया, डूबि मरै तेहि मरने दे ॥३॥
धरमदास के साहेब कबीरा, पथर पूजै तो पुजने दे ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

नैनन आगे ख्याल घनेरा ॥ टेक ॥
जेहि कारन जग डोलत भरमे,
सो साहेब घट लीन्ह बसेरा ॥१॥

---

(१) स्त्री। (२) सोहाग।

का संझा का प्रात सबेरा,
जहँ देखूँ जहँ साहेब मेरा ॥ २ ॥
अर्ध उर्ध बिच लगन लगी है,
साहेब घट में कीन्हा डेरा ॥ ३ ॥
साहेब कबीर एक माला दीन्हा,
धरमदास घट ही बिच फेरा ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साहेब मोरे दीन्ही चोलिया नई ॥ टेक ॥
तीन पाँच मोरि चोलिया के घुंडी,
लागो कुमति सुमतिया की पाती ॥ १ ॥
यह चोलिया मोरे ससुरे से आई,
चोलिया पहिरि धनि भई अलमाती ॥ २ ॥
सुनहु हो मोरी पार परोसिन,
यह चोलिया बिरला जन जानी ॥ ३ ॥
पहिले बियाह मोर भयो सतगुरु से,
चोलिया के बँद मोरे सतगुरु खोली ॥ ४ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
बिसरि गई नइहरवा की बोली ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साहेब मोरे पठई चोलो अनमोल ॥ टेक ॥
यह चोलिया मोरे ससुरे से आई,
चोलिया पहिरि हम भईं अतोल ॥ १ ॥
यह चोलिया में सहस बँद लागे,
चोलिया के बँद मोरे सतगुरु खोल ॥ २ ॥

चोलिया पहिरि धनि चली है गवनवा,
सेत पितंबर लागे हिँडोल ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
नैहर सुपना भयल अब मोर ॥ ४ ॥

॥ शब्द ९ ॥

जागु बहुरिया पहिरु रँग सारी ॥ टेक ॥
जागत भागीँ पाँच कुँआरी,
जनम जनम के ताप निवारी ॥ १ ॥
तजि कुल कानि से होइ रहु न्यारी,
अबके बिछुरे बिपति अति भारी ॥ २ ॥
जो खोलो पिय आय किवारी,
पहिरोँ चीर अमर अति भारी ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी,
साहेब कबीर मोर गवन निवारी ॥ ४ ॥

॥ शब्द १० ॥

बरनोँ संत समाज, जिनकी ज्ञान कचहरी ॥ टेक ॥
काया नगर में सुरति जँजीरा, सेत धजा फहराना ।
सहन[1] बिछौना सब्द सिपाही, सतगुरु नाम खजाना ॥ १ ॥
संतोष तख्त पर ज्ञान है राजा, बिबेक भया दीवानी ।
जगमग जोति छत्र सिर ऊपर, मुक्ति भरे जहँ पानी ॥ २ ॥
काम क्रोध को सहज निकारो, माया के मूँड़ मुँड़ावो ।
लोभ मोह सब दूरि बहावो, ऐसन अदल चलावो ॥ ३ ॥
सहज को दया बचन करुसीतल, सब को सब्द सुनावो ।
धरमदास विनवै कर जोरी, समरथ सरना आवो ॥ ४ ॥

---

(१) बर्दाश्त ।

॥ शब्द ११ ॥

हमरे का करे हाँसी लोग ॥ टेक ॥

मोरा मन लागा सतगुरु से, भला होय कै खोर[1] ।
जब से सतगुरु ज्ञान भयो है, चलै न केहु कै जोर ॥ १ ॥
मात रिसाई पिता रिसाई, रिसाय बटोहिया लोग ।
ज्ञान खड़ग तिरगुन को मारूँ, पाँच पचीसो चोर ॥ २ ॥
अब तो मोहिँ ऐसी बनि आवे, सतगुरु रचा सँजोग ।
आवत साध बहुत सुख लागैं, जात बियापै रोग ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सुनु हो बंदी-छोर ।
जा को पद त्रयलोक से न्यारा, सो साहेब कस होय ॥ ४ ॥

॥ शब्द १२ ॥

जेहि सुमिरे गुन का भये, जा से कर्म न नासा ॥ टेक ॥
पौँड़त पौँड़त भवजले, काहू पार न पावा ।
बूड़ि गये नइया मिले, कहो केहिक चढ़ावा ॥ १ ॥
स्वाँति बुंद के कारने, चात्रिक चित लावै ।
प्यास गये सलिता मिले, कहो केहि क पियावै ॥ २ ॥
नो कन्या के कारने, धरो बंक कराला ।
कपट रूप पाखँड रच्यो, वोहि पैज सँवारा ॥ ३ ॥
औगुन है सब दास को, गुन साहेब तुम्हारा ।
धरमदास बिनती करै, स्वाँसा धन धारा ॥ ४ ॥

॥ शब्द १३ ॥

सतगुरु कहत नाम गुन न्यारा ॥ टेक ॥
कोइ निर्गुन कोइ सर्गुन गावै, कोइ किरतिम कोइ करता ।
लख चौरासी जीव जंतु में, सब घट एकै रमिता ॥१॥

(१) बुरा ।

सुनो साध निरगुन की महिमा, बूझै बिरला कोई।
सरगुन फंदे सबै चलत है, सुर नर मुनि सब लोई ॥ २ ॥
निर्गुन नाम निअच्छर कहिये, रहे सबन से न्यारा।
निर्गुन सर्गुन जम के फंदा, वोहि के सकल पसारा ॥ ३ ॥
साहेब कबीर के चरन मनावो, साधुन के सिर-ताजा।
धरमदास पर दाया कीन्हा, बाँह गहे की लाजा ॥ ४ ॥

॥ शब्द १४ ॥

साहेब हमरे सहज लगी डोरी ॥ टेक ॥

यह डोरी मोहिँ सतगुरु दीन्हा,
हमहिँ अधीन अपन करि लीन्हा ॥ १ ॥
यह डोरी मोरे प्रान उबारे,
ले भवसागर पार उतारे ॥ २ ॥
यह डोरी चढ़ि जात गगन मेँ,
निसु दिन साहेब सँग रहत मगन मेँ ॥ ३ ॥
धर्मदास बिनवै कर जोरी,
काल कष्ट से तिनुका तोरी ॥ ४ ॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब येहि बिधि ना मिले, चित चंचल भाई ॥ टेक ॥
माला तिलक उरमाइ के, नाचै अरु गावै।
अपना मरम जानै नहीँ, औरन समुझावै ॥१॥
देखे को बक ऊजला, मन मैला भाई।
आँखि मूंदि मौनी भया, मछरी धरि खाई ॥२॥
कपट कतरनी पेट मेँ, मुख बचन उचारी।
अंतर गति साहेब लखे, उन कहा छिपाई ॥३॥
आदि अंत की वार्ता, सतगुरु से पावो।
कहै कबीर धरमदास से, मूरख समझावो ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

भव सागर नदिया बहुत अगम है,
केहि बिधि उतरौं पारा हो ॥ टेक ॥
यह भव देख जिया मोर काँपै,
नैन बहै जल धारा हो।
वार पार कछु सूझत नाहीं,
मोह लहर झकझोरा हो ॥ १ ॥
नहिँ देखौं नाव न देखौं बेरा,
नहिँ देखौं खेवनहारा हो।
येहि औसर प्रभु केकाँ[1] गोहराऔं,
बूड़त हौं मँझ धारा हो ॥ २ ॥
असी कोस बालू के रेतिया,
असी कोस अँधियारा हो।
असी चार चौरासी जोजन,
जहँवाँ जम रखवारा हो ॥ ३ ॥
जोग जाप एको नहिँ कीन्हा,
ना गुरु से ब्योहारा हो।
खाल खैँचि जम भुसा भरिहै,
बढ़ई चलावै जस आरा हो ॥ ४ ॥
अगम भूमि से गुरु चलि आये,
सुनि के सब्द हमारा हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा,
अपने जनहिँ उबारा हो ॥ ५ ॥

(१) किस को।

॥ शब्द १७ ॥

सइयाँ महरा[1], मोर डोलिया फँदावो ॥ टेक ॥

काहे के तोर डोलिया पालकी,
काहे के ओहि में बाँस लगावो ॥ १ ॥

आव भाव के डोलिया पालकी,
सत्त नाम के बाँस लगावो ॥ २ ॥

प्रेम के डोर जतन से बाँधो,
ऊपर खलीता[2] लाल ओढ़ावो ॥ ३ ॥

ज्ञान दुलीचा झारि बिछावो,
नाम के तकिया अरध लगावो ॥ ४ ॥

धरमदास विनवै कर जोरी,
गगन मँदिल में पिया दुलरावो ॥ ५ ॥

॥ शब्द १८ ॥

पिया परदेसिया, गवन लैजा मोर ॥ टेक ॥

आव भाव का अनवट बिछुआ,
शब्द के घुँघरू उठे घनघोर ॥ १ ॥

तन सारी मन रतन लहँगवा,
ज्ञान की अँगिया भई सरबोर ॥ २ ॥

चारि जना मिलि लेइ चले हैं,
जाइ उतारे जमुनवा के कोर ॥ ३ ॥

धरमदास विनवै कर जोरी,
नगरी के लोग कहैं कुल-बोर ॥ ४ ॥

---

(१) कहार। (२) ओहार।

॥ शब्द १९ ॥

गाँठ परी पिया बोले न हम से ॥ १ ॥

माल मुलुक कछु संग न जैहै,
नाहक बैर किये है जग से ॥ २ ॥

जो मैं जनितिउँ पिया रिसियै है,
नाहक प्रीति लगाती न जग से ॥ ३ ॥

निसु बासर पिय सँग मैं सूतिउँ,
नैन अलसानो निकरि गये घर से ॥ ४ ॥

जस पनिहारि धरे सिर गागर,
सुरति न टरै बतरावत[1] सब से ॥ ५ ॥

धरमदास बिनवै कर जोरी,
साहेब कबीर को पावै भाग से ॥ ६ ॥

॥ शब्द २० ॥

मेरे मन बसि गये साहेब कबीर ॥ टेक ॥

हिन्दू के तुम गुरू कहाओ, मुसलमान के पीर ।
दोऊ दीन ने झगड़ा माड़ेव, पायौ नहीं सरीर ॥ १ ॥

सील सँतोष दया के सागर, प्रेम प्रतीत मति-धीर ।
बेद कितेब मते के आगर, दोउ दीनन के पीर ॥ २ ॥

बड़े बड़े संतन हितकारी, अजरा अमर सरीर ।
धरमदास की बिनय गुसाँईं, नाव लगावो तीर ॥ ३ ॥

॥ शब्द २१ ॥

अमर लोक से हम चलि आये, आये जगत मँझारा हो ।
स्याही छाप पर्वाना लाये, समरथ के कढ़िहारा हो ॥ १ ॥

जीवन दुखित देखि संसारा, तेहि कारन पग धारा हो ।
बंस बंयालिस थाना रोपूँ, जंबू दीप मँझारा हो ॥ २ ॥

---

(१) बात चीत करती है।

दसो मोकाम की भक्ति दृढ़ाऊँ, चौका पान पर्वाना हो।
बारह पंथ चलैंगे आगे, घर घर बोध पसारा हो॥ ३॥
गुरू सहित सब चेला डूबे, फिर फिर गर्भ मँझारा हो।
बचन बंस को बीरा पावे, तब होइहै निरवारा हो॥ ४॥
तेरह पीढ़ी ज्ञान रजधानी, चूरामनि औतारा हो।
उनके अंग छाँह नहिँ होइहै, देह बिदेह अपारा हो॥ ५॥
उनके आगे जुग मति चलिहै, राज नीति उठि जाई हो।
पाँच सब्द की इच्छा नाहीं, यह गति सब में छाई हो॥ ६॥
जब लौं कौल पूर नहिँ आवै, तब लग भेद छिपावो हो।
कोटिन करै बहुत को थापै, फेरि काल घर आवै हो॥ ७॥
पाँच हजार पचीस के बीते, सत्त चाल ठहराई हो।
पारस पान जबै पुनि उगिहै, जग निद्रा मिटि जाई हो॥ ८॥
जो कोइ होय सत्त के तिनुका, सोई मोहिँ पतिआई हो।
की तो अमी अंकुरै वा में, की गुरु चरन सिधाई हो॥ ९॥
ना गुरु सरन न नाम की करनी, कैसे हंस कहावै हो।
बारह पंथ मिलैंगे आगे, छाँड़ कपट चतुराई हो॥ १०॥
कहै कबीर सुनो धर्मदासा, आगम तोहि लखाऊँ हो।
जो कोइ हंसा होइ हमारा, तिन का देहु लखाई हो॥ ११॥

॥ पहाड़ा ॥

कोई लोढ़त संत सुजान, काया बन फूलि रहा॥ टेक॥
एका एक मिलै गुरु पूरा, मूल मंत्र तब पावै।
सब साधन की बानी बूझै, मन परतीत बढ़ावै॥ १॥
दूआ दुई तजै मन दुबिधा, रज गुन मन से त्यागै।
सतगुरु ऊरध[1] माहीं निरखै, सोवन से उठि जागै॥ २॥

(१) ऊँचे।

तीआ तीन त्रिवेनी संगम, जहाँ अगम अस्थाना।
तन मन की सब त्रिस्ना त्यागै, कोइ हरिजन करै अस्नाना ३
चौआ चार चतुर्भुज सोहै, पँचवें पद को धावै।
प्रेम हिँडोला झूला झूलै, उपजै चित अनुरागै॥ ४॥
पाँचे पाँच पचीसो बस करि, साँचे होइ ठहरावै।
इँगला पिँगला सुखमनि सोधै, तब चरनोदक पावै॥ ५॥
छठएँ छैयो चक्कै बेधै, सुन्न भवन मन लावै।
बिगसै कँवल काया के भीतर, तब चंदा दरसावै॥ ६॥
सतएँ सात सत्त धुनि उपजै, धुनि सुनि आनँद बाढ़ी।
सहजै दीनदयाल कृपा-निधि, बूड़त भौजल काढ़ी॥ ७॥
अठएँ आठै अष्ट कँवल में, ऊरध निरखै सोई।
आतम चीन्हि परमातम चीन्है, ताहि तुलै नहिँ कोई॥ ८॥
नवएँ नवो द्वार होइ निरखै, जहँ बरै जगमग जोती।
दामिनि दमकै अमृत बरसै, अजर झरै जहँ मोती॥ ९॥
दसएँ दसम द्वार चढ़ि बैठे, पढ़ि लै एक पहाड़ा।
धरमदास चरनन पड़ि बिनवै, निसु दिन बारम्बारा॥१०॥

॥ नाम लीला ॥

साहेब अविचल नाम, दया करि पाइये॥ टेक॥
प्रथम बन्दौं गुरु चरन, सीस संतन को नाऊँ।
सतगुरु होयँ दयाल, तो नाम चरित्र सुनाऊँ॥
सत्त सुकृत हिरदे बसै, कबहुँ न आवै हारि।
अविगति से परिचै भई, तो आवागवन निवारि॥१॥
कहा आन की सेव, जीव को भर्म न भाजै।
अलख सरूपी आप, तहाँ अनहद धुनि गाजै॥

यह धुनि सुनि अविचल रहो, इत उत मन नहिँ जाय ।
अमृत केरी बुन्द है, सो अमृत माहिँ समाय ॥ २ ॥
प्रथम पुरुष पग धरयो सत्त, सतजुग में आये ।
परमारथ के काज, जीव की बन्दि छोड़ाये ॥
कागा तें हंसा किया, जाति बरन कुल खोय ।
जम से तिनुका तोरि के, गंज न सकै कोय ॥ ३ ॥
सतजुग गयो व्यतीत, सुनो त्रेता की बानी ।
धरयो मुनिन्द्र को रूप, आप सत सुकृत ज्ञानी ॥
हंसन को परमोधि के, आप रहो नीनार ।
नाम प्रतीत बसे जो जिव को, सो जन उतरे पार ॥ ४ ॥
त्रेता गयो व्यतीत, सुनो द्वापर की बानी ।
करुनामय को रूप धरयो, सत सुकृत ज्ञानी ॥
चेतनहारा चेतियो, बहुरि न चेता जाय ।
सत्त सुकृत चीन्हे बिना, काल सभन को खाय ॥ ५ ॥
कलिजुग प्रगट कबीर, काल को देखा जोरा ।
किये कासी अस्थान, आप भे बन्दीछोरा ॥
मुनि पंडित सब बादहीँ, कोई न पहुंचे ज्ञान ।
निर्गुन लीला धारि के, आप पुरुष निर्बान ॥ ६ ॥
कलिजुग कर्म अपार, जीव कोइ कहा न मानै ।
सीखे साखी सब्द, उलटि के वाद बखानै ॥
वाद किये पहुँचे नहीँ, मन ममता के जोर ।
लख चौरासी जिया जोनि में, भर्मै नरक अघोर ॥ ७ ॥
कठिन काल को रूप, अंत कोइ जानि न भाई ।
जब आवै मृतु अंध, जीव कहँ जाय पराई ॥

नाम बिना बाचै नहीँ, केतौ करैं उपाय।
तीरथ जाय सकल भ्रमि आवै, जम को त्रास न जाय ॥ ८ ॥

बहुत ज्ञान बहु गम्य, बहुत मूरत को पूजै।
दीपक बरै अनेक, अंध को आँखि न सूझै ॥
बहुतक जुग भरमत फिरै, कितहुँ न पावै दाद।
सात द्वीप नौ खंड में, सत्य नाम बिनु बाद ॥ ९ ॥

सतगुरु का उपदेस, संत कोउ बिरला जानै।
करे तत्त्व का खोज, बहुरि संकट नहिँ आनै ॥
ऐसे सुरति लगाइये, जैसे चन्द चकोर।
कठिन पड़े सुख दुख सहै, प्रीत निभावै ओर ॥ १०॥
अविगति अगम अपार, और सब दीसै बाजी।
पढ़ि पढ़ि बेद कितेब, भुले पंडित औ काजी ॥
अगम गम्य जाने नहीं, बीचहिँ परे भुलाय।
जैसे ज्वारी जुवा खेलि के, सरबस चले गँवाय ॥ ११॥
नहिँ सागर नहिँ सिखर, नहीँ तहँ पवन न पानी।
नहिँ धरती आकास, नहीँ कछु और निसानी ॥
चन्द सूर वा घर नहीँ, नहीँ दिवस नहिँ राति।
जहाँ पुरुष आपै बसै, तहँ कुल कर्म न पाँति ॥ १२॥
वहाँ नहीँ तीरथ ब्रत, नहिँ तहँ बेद बिचारा।
नहिँ देवी नहिँ देव, नहीँ कछु नेम अचारा ॥
जरा मरन वा घर नहीँ, नहीँ लाभ नहिँ हान।
प्रेम मगन हंसा रहै, सो धरै पुरुष को ध्यान ॥ १३॥
जहाँ पुरुष रहै आप, तहाँ हंसन को वासा।
तहँ नहिँ माया मोह, नहीँ तहँ तृष्ना आसा ॥

हर्ष सोक वा घर नहीँ, नहीँ कर्म ब्यवहार।
हंसा परम अनंद में, (सो) छूटे भ्रम जंजार ॥ १४॥
चारो जुग के हंस, सत्य सतलोक सिधाये।
भ्रमत फिरे सब काग, दूत बैठे रखवाये ॥
मुनि पंडित जोगी जती, धरे काल को ध्यान।
तीन लोक के बाहरे, कोई न पाये जान ॥ १५॥
भ्रमत फिरे जुग चारि, रूप कीन्हा बिस्तारा।
अजहुँ न समुझे अंध, परे जम काल की धारा ॥
बहुत भाँति परमोधिया, कोइ कोइ लीन्हा मान।
आदि अंत के हंस हैं, सो प्रगट भये हैं आन ॥ १६॥
अनजाने को दूरि, जाने को निकट बिराजै।
सब्द सनेही संत, सोई सब ऊपर छाजै ॥
मगन होय मन को गहै, हंस रूप आनन्द।
सुमिरन दीनदयाल को, ज्यों उड़गन[1] में चन्द ॥ १७॥
बहुत गुरू संसार रहत, घर कोइ न बतावै।
आपन स्वारथ लागि, सीस पर भार चढ़ावै ॥
सार सब्द चीन्हें नहीँ, बीचहिँ पर भुलाय।
सत्त सुकृत चीन्हे बिना, सब जुग काल चबाय ॥ १८॥
यह लीला निर्वान, भेद कोइ बिरला जाने।
सब जग भरमे डार, मूल कोइ बिरला माने ॥
मूल नाम एक पुरुष है, पुष्पद्वीप में बास।
सतगुरु मिलैं तो पाइये, पूरन प्रेम बिलास ॥ १९॥
नाम सनेही होय, दूत जम निकट न आवै।
परमतत्त्व पहिचानि, सत्त साहेब गुन गावै ॥

(१) तारा।

अजर अमर बिनसै नहीं, सुख सागर में बास।
केवल नाम कबीर है, गावै धनि धर्मदास ॥२०॥

॥ मुक्ति लीला ॥

हीरा जन्म न बारम्बार, समुझि मन चेत हो ॥ टेक ॥
जैसे कीट पतंग पषान, भये पसु पच्छी।
जल तरंग जल माहिँ, रहे कच्छा औ मच्छी ॥
अंग उघारे रहे सदा, कबहुँ न पावें सुक्ख।
सत्य नाम जाने बिना, जन्म जन्म बड़ दुक्ख ॥ १ ॥
सीतल पासा हारि, दाव खेलो सँम्हारी।
जीतो पक्की सार, आव जनि जैहो हारी ॥
रामै राम पुकारि के, लीन्हो नरक निवास।
मूड़ गड़ाय रहे जिव, गर्भ माहिँ दस मास ॥ २ ॥
गर्भ दुक्ख तेँ काढ़ि, प्रगट प्रभु बाहर कीन्हो।
भक्ति अंग को छापि, अंक दस्तक लिखि दीन्हो ॥
वा को नाम बिसरि गयो, जिन पठयो संसार।
रंचक सुख के कारने, बिसरि गयो निज सार ॥ ३ ॥
नहिँ जाने केहि पुन्य, प्रगट भे मानुष देही।
मन बच कर्म सुभाव, नाम से कर ले नेही ॥
लख चौरासी भर्मि के, पायो मानुष देह।
सो मिथ्या कस खोवते, झूठी प्रीति सनेह ॥ ४ ॥
बालक बुद्धि अजान, कछू मन में नहिँ आने।
खेले सहज सुभाव, जहीँ आपन मन माने ॥
अधर कलोले होइ रह्यो, ना काहू को मान।
भली बुरी ना चित धरै, बारह बरस समान ॥ ५ ॥

जोबन रूप अनूप, मसी मुख ऊपर छाई।
अंग सुगन्ध लगाय, सीस पगिया लटकाई ॥
अंध भये सूझै नहीँ, फूटि गई है चार[1]।
झटके पड़े पतंग ज्यौं, देखि बिरानी नार ॥ ६ ॥
जोबन जोर झकोर, नदी उर अंतर बाढ़ी।
संतो हो हुसियार, कियो न बाँहू गाढ़ी ॥
दे गजगीरी प्रेम की, मूँदो दसो दुवार।
वो साँईँ के मिलन में, तुम जनि लावो बार ॥ ७ ॥
बृद्ध भये पछिताय, जबै तीनोँ पन हारे।
भई पुरानी प्रीति, बोल अब लागत प्यारे ॥
लच कच दुनियाँ ह्वै रही, केस भये सब सेत।
बोलत बोल न आवई, लूटि लिये जम खेत ॥ ८ ॥
माया रंग कुसुम्म, महा देखन को नीको।
मीठो दिन दुइ चार, अंत लागत है फीको ॥
कोटिन जतन रह्यो नहीँ, एक अंग निज मूल।
ज्यौं पतंग उड़ि जायगो, ज्यौं माया काफूर ॥ ६ ॥
नाम रंग मंजीठ, लगे छूटे नहिँ भाई।
लच पच रहो समाय, सार ता में अधिकाई।
केती बार धुलाइये, दे दे करड़ा धोय।
ज्यौं ज्यौं भट्ठी पर दिये, त्यौं त्यौं उज्जल होय ॥१०॥
निकट जमन के जात, तबै ह्वैगो सुख कारो।
बोले बोल न आय, तबै तोहि करिहैं गारो[2] ॥
काल छली तिहुँ लोक में, नहिँ काहू की मान।
राजा राना मारिया, सबहीँ कीन्ह दिवान[3] ॥११॥

(१) दो अन्तर की दो भीतर की आँखें। (२) कारागार या जेलखाना। (३) दिवाना।

देऊँ सुमति बिचार, सीख जो मेरी मानो।
चलो सुमारग चाल, भलो जो अपनो जानो॥
तिरिया निकट बुलाइ के, दे गइ माथे हाथ।
लेगइ रंग निचोइ के, ज्यों तेली कै काथ[१] ॥१२॥
जो मरि भाखा बोल, बोलि कामिन चित चोर्‌यो।
छिनहीं प्रीति बढ़ाय, नाम से नाता तोर्‌यो॥
रस बस कीन्हो आइ के, गयो ठगौरी मेल।
जीव लोभ बस फँसि रहे, करि केवल सुख केल ॥१३॥
सोवत हो केहि नींद, मूढ़ मूरख अज्ञानी।
भोर भये परभात, अबहिं तुम करो पयानी॥
अब हम साँची कहत हैं, उड़ियो पंख पसार।
छुटि जैहो या दुक्ख तें, तन सरवर के पार ॥१४॥
नाव झाँझरी साजि, बाँधि बैठो बैपारी।
बोझ लद्यो पाषान, मोहिं डर लागै भारी॥
माँझ धार भव तखत में, आइ परैगी भोर।
एक नाम केवटिया करि ले, सोई लगावै तीर ॥१५॥
सौ भइया की बाँह, तपे दुर्जोधन[२] राना।
परे नरायन बीच, भूमि देते गरवाना[३]॥
जुद्ध रच्यो कुरुछेत्र में, बानन बरसे मेंह।
तिनहीं के अभिमान तें, गिधहुँ न खायो देंह ॥१६॥
छत्रपती भूपाल रहत, देखा नहिं कोई।
दिन दस गये बजाइ, गर्द माँ मिलिगे सोई॥

---

(१) तरछट। (२) दुर्योधन कौरवों के राजा के सौ भाई थे, जो सब महाभारत में मारे गये। (३) राजा युधिष्ठिर को थोड़ी ज़मीन श्रीकृष्ण ने दिलाना चाहा था पर दुर्योधन ने शेखी से इनकार किया।

परिहौ नरक अघोर में, अब किन चेतो अंध।
सत्त नाम जाने बिना, परो काल के फंद ॥१७॥
हुई सलीता संग, बहुत हाथी औ घोरा।
मरन की बेरिया संग, चले नहिं एको डोरा॥
कंचन महल धरे रहे, और सुंदरी नारि।
ज्यों करि आये त्यों गये, चले दोऊ कर झारि ॥१८॥
जोधा आगे उलट पुलट, यह पुहमी[1] करते।
बस नहिं रहते सोय, छिने इक में बल होते॥
सौ जोजन मरजाद सिंध कै, करते एकै फाल[2]।
हाथन पर्वत तौलते, तिन धरि खायो काल ॥१९॥
ऐसा यह संसार, जैसी रहटे की घरिया।
इक रीते फिरि जाय, एक आवै फिरि भरिया॥
उपजि उपजि बिनसन कर, फिरि फिरि जमे गिरास।
यही तमासा देखि के, मनुवा भयो उदास ॥२०॥
जैसे कलपि कलपि के, भये हैं गुड़ की माखी।
चाखन लागी बैठि, लपट गइ दोनों पाँखी॥
पंख लपेटे सिर धुनै, मनहीं मन पछिताय।
वह मलयागिरि छाँड़ि के, इहाँ कौन बिधि आय ॥२१॥
खेत बिराना देखि, मृगा एक बन को रीझेव।
नित प्रति चुनि चुनि खाय, बान में इक दिन बीधेव॥
उचकन चाहै बल करै, मनहीं मन पछिताय।
अब सो उचकि न पाइ हो, धनी[3] पहूँचो आय ॥२२॥
रहे दूध के दूध, जाय पानी के पानी।
सुनो स्रवन चित लाय, कहौं कछु अकथ कहानी॥
अकह कमल तें स्रुति उठी, अनुभव सब्द प्रकास।
केवल नाम कबीर है, गावै धनि धर्मदास ॥२३॥

(१) पृथ्वी। (२) फलाँग। (३) खेतिहर।

... पुस्तकों का सूचीपत्र

[हर महात्मा का जीवन-चरित्र उनकी बानी के आदि में दिया है]